PARAM SHANTI STHAL, Manavta Mandir, Hoshiarpur Punjab (India) – a view from inside

परमशान्ति स्थल, मानवता मन्दिर, होशियारपुर, पंजाब (भारत) का एक आन्तरिक दृश्य

अद्भुत मोती

परम दयाल
परमसन्त पं. फकीरचन्द जी महाराज

अद्‌भुत मोती

परमसंत दयाल फकीरचन्द जी महाराज
के प्रवचन
कबीर साहब के शब्द के आधार पर
मोती की अद्‌भुत व्याख्या

प्रकाशक :
फकीर लाइब्रेरी चैरिटेबल ट्रस्ट
होशियारपुर।

पुनर्मुद्रित
दूसरा संस्करण : 2015

विषय सूची

गुरु ब्रह्मा गुरु विष्णु गुरुर्देव महेश्वरः
गुरु साक्षात् पर ब्रह्म तस्मै श्री गुरुवेनमः

सतगुरु महिमा

जाके रहनि अपार जगत में, सो गुरु नाम पियारा हो॥ टेक॥
जैसे पुरइनि रहि जल भीतर, जलहि में करत पसारा हो।
वाके पानी पत्र न लागै, ढरकि चलै जस पारा हो॥ १॥
जैसे सती चढ़ै, सत ऊपर, स्वामी वचन न टरा हो।
आप तरै औरन को तारै, तारै कुल परिवारा हो॥ २॥
जैसे सूर चढै रन ऊपर, पाछे मगन ललकारा हो॥ ३॥
भव सागर इक नदी अगम है, लख चौरासी धारा हो।
कहत कबीर सुनो भाई साधो, बिरलै उतरे पारा हो॥ ४॥

अद्भुत मोती
(प्रवचन-सिकदंराबाद, २७-१-६४)

कर्म का चक्र हर एक व्यक्ति को राजा या हो प्रजा, पीर हो या पैगम्बर, संत हो या अवतार सबको खेल खिलाता रहता है। मैं भी कर्म के चक्र में आया हुआ हूँ। मेरा कर्म क्या है? छोटी उम्र में हिन्दू धर्म के संस्कारों से प्रभावित होकर उस मालिक से मिलने को तड़पा करता था। उसको कोई किसी विधि से पूजता है, कोई कैसे ही याद करता है। लाखों ही सम्प्रदाय हैं। स्वाभाविक रूप से उस मालिक से मिलने की तलाश के सिलसिले में मेरा कर्म या मौज मुझे दाता दयाल (महर्षि शिव) के चरणों में ले गई। वहाँ से यह नाम मिला, जो नाम आप लोग भी लेते हैं या जिस नाम के लिये लोग साधन करते हैं।

चूंकि धर्म, सम्प्रदाय और पंथों की पोथियों की वाणियों में भिन्नता थी, किसी धर्मावलम्बी ने कुछ कहा, किसी ने कुछ कहा इसलिये किसी बात पर निश्चय नहीं होता था। इस कारण सन् १९०५ ई० में मैंने प्रण किया था कि इस मार्ग पर चलने के बाद जो समझ में आयेगा बता जाऊँगा। जो मेरी इच्छा थी वह मेरा कर्म बन गया। उसे भोगने को ही शायद दाता दयाल ने आज्ञा दी हो कि संत्सग कराया करना और धार्मिक शिक्षा में परिवर्तन कर जाना।

वर्तमान समय में प्रजातंत्र राज्य (Democray) है। हर आदमी अपनी-अपनी लाइन की खोज (Research) करता है। अपने अनुभव को लेखबद्ध कर जाता है। वह उसकी थीसिस (Thesis) लिखता है। यह जो मेरा काम है अथवा सत्संग प्रवचन हैं यह मेरी रिसर्च की थीसिस (Thesis) है।

ऐसा समय आ गया था कि जिस महापुरुष ने जो रिसर्च (खोज) की उसे लेखबद्ध किया। दूसरे लोगों ने उसे अन्ध-विश्वास से मान लिया। कोई अपनी खोज नहीं की। किसी ने और नई बात बताई तो दूसरे खिलाफ हो गये। धन्यवाद है कि हमारी हुकूमत मज़हबी (सम्प्रदायवादी) नहीं है। यदि किसी विशेष धर्म, सम्प्रदाय या मजहब के मानने वाली होती तो मेरे जैसे को फाँसी दे दी जाती। जीसस-क्राईस्ट की क्या दशा हुई? उन्होंने सिद्ध किया कि जमीन गोल है। दूसरे ने कहा कि चौड़ी है, जो जीसस-क्राईस्ट के कथन के विरुद्ध था। जीसस क्राईस्ट से कहा गया कि अपने शब्दों को वापिस लो। उसने फिर रिसर्च की। उसकी रिसर्च में फिर वही बात आई। उसे फिर डराया कि अपने शब्द वापिस लो। तीसरी बार उसने फिर खोज की और कहा कि जमीन गोल है चाहे फाँसी दे दो और उसे फाँसी दे दी गई।

मेरी रिसर्च (खोज) का परिणाम

मैंने रिसर्च की है और करता आ रहा हूँ। जिन्होंने मेरे साहित्य को पढ़ा है अथवा मेरी विचार धारा को सुना है उनको वह बताता हूँ कि जो मेरी रिसर्च का परिणाम है। मेरी इस आत्मिक और मानसिक रिसर्च पर इस मज़हबी दुनिया के लोग क्या सलूक करेंगे मैं नहीं कह सकता मगर मैं वही कह रहा हूँ जो कबीर कह गया अर्थात् मेरी रिसर्च का परिणाम भी वही निकला जो कबीर ने कहा। उनका एक शब्द है :-

मेरी नजर में मोती आया है॥ टेक॥

कोई कहे हलका कोई कहे भारी, दूनों भूल भुलाया है॥
ब्रह्मा विष्णु महेसुर थाके, तिनहू खोज न पाया है॥

संकर सेश औ सारद हारे, पढ़ि रटि गुन बहु गाया है॥
है तिल के तिल के तिल भीतर, बिरले साधू पाया है॥

चहुँ दल कँवल तिर्कुटी साजे, औंकार दरसाया है॥
ररंकार पद सेत सुन्न मध, षटदल कंवल बताया है॥

पार ब्रह्म महासुन्न मंझारा, सोइ निः अच्छर रहाया है॥
भंवर गुफा में सोहं राजै, मुरली अधिक बजाया है॥

सत्त लोक सत्त पुरुष विराजै, अलख अगम दोऊ भाया है॥
पुरुष अनामी सब पर स्वामी, ब्रह्मण्ड पार जो गया है॥

यह सब बातें देही माहीं, प्रतिबिम्ब अंड जो पाया है॥
प्रतिबिंब पिंड ब्रह्मडं है नकली, असली पार बताया है॥

कहै कबीर सत लोक सार है, यह पुरुष नियारा पाया है॥

ज्ञात नहीं कि कबीर का क्या भाव इस शब्द से या मोती से है। किस भाव और किस आधार पर उन्होंने यह शब्द लिखा है मैं नहीं जानता। मैं अपने अनुभव के आधार पर यह कहता हूँ कि मेरी नजर में एक मोती आया है।

सवाल होता है मोती है क्या? मोती चमकदार होता है। बहुत कीमत का होता है उसके देखने से मनुष्य बड़ा प्रसन्न होता है। उसका मूल्य जान कर अपने को धनी समझता है। मोती सीप से पैदा होता है। मेरी देह भी सीप है। तुम्हारी देह भी सीप है। खोजते-खोजते यह अनुभव किया कि सीप में एक मोती है।

कोई कहे हलका, कोई कहे भारी, दूनों भूल भुलाया है।

हलका भारी क्या है। अपने अनुभव के आधार पर कहता हूँ कि उस परमात्मा से मिलने चले थे। कोई उसकी प्राप्ति के लिये कठिन तपस्या करता है। कोई जप-तप, तीर्थ व्रत, दान करता है। उसका भाव यह है कि यह भारा है। कोई कहता है यह करो वह करो। कई वेदान्ती अपने

आप को ब्रह्मास्मि कहते हैं। उन्होंने यह ख्याल ले लिया कि मैं ब्रह्म हूँ, ईश्वर हूँ। वह मोती वेदान्यिों को हल्का है दूसरों को जो योग जप-तप आदि करते हैं उनको भारा है।

मैंने कहा कि मेरा दावा नहीं कि जो कबीर का भाव है उसे मैं जानता हूँ। मैंने कठिन से कठिन तप किये। सच्चाई के रास्ते पर चला। ईमानदारी का जीवन बिताया। धोखे से सदा बचने की कोशिश की। यह मेरी कठोर तपस्या है। इतना करने से मुझ में एक अहंकार आ गया मगर चित्त को शान्ति नहीं मिली। कौन सी शान्ति? वह शान्ति जिसको पाकर परमात्मा या खुदा या राम की तलाश न रहे।

मैं राम या परमात्मा को मिलने को चला था। उसके प्राप्त करने से क्या समझा? उसके पाने के लिये मैंने घोर तप या अभ्यास किया। अन्तर में घंटा रारंग, सारंग, बीन आदि शब्द सुने। सोचा मैदान मार लिया। दिल में अभिमान था। दाता दयाल (महर्षि शिव व्रतलाल) के पास लाहौर गया। उन्होंने कहा देखूँ तुमने क्या कमाई की है मुझे देखा और बोले 'फकीर' योगी हो गये। ऋद्धि-सिद्धि आ गई मगर असली फकीरी नहीं आई।' दिल उदास हो गया। कहा अच्छा कल तुम्हारा इम्तहान लेंगे। सोचता था कि यह पूछेंगे कि किस चक्र पर क्या देखा और क्या सुना। जब मैं वहाँ रहता तो सेवा करता था। झाडू और बुहारू लगाता। खाना भी बनाता। दस-पाँच सत्संगी आये हुये थे। मैं चौके में बैठा था। वहाँ आप आ गये और कहा साग मैं बनाऊँगा। चौके में बैठे और एक मिनट में ५० हुक्म दे दिये एक के बाद एक। नमक ला, हल्दी ला, जीरा ला। यह ला, वह ला एक हुक्म को पूरा न कर पाता कि दूसरा-तीसरा हुक्म दे जाते और पहिले वाले पूरे न हो पाते। मैं घबरा गया। घी में आग लग

गई। खैर उसे ढक दिया और वह चले गये। मैं शाम को बैठा हुआ था। मैंने कहा महाराज मेरा इम्तहान नहीं लिया। उत्तर दिया कि इम्तहान ले लिया गया और तुम फेल हो गये। तुम साग बनाते समय घबरा गये। दुनिया में न घबराना ही फकीरी है। तुम लोगों में से बहुत से ऊँचे स्थानों पर अभ्यास करते है। मैं उनको अपने जीवन का संदेश सुनाता हूँ।

वह यह कि जीवन की किसी हालत में भी न घबराना वह मोती है। दुनिया के पोलीटिकल, सामाजिक, अध्यात्मिक जीवन में कभी घबराना नहीं चाहिये।

फिर मोती क्या है? वह है हमारी वह अवस्था जहाँ किसी समय में घबराहट का नाम न आये। मेरी समझ में यह मोती आया है।

सन् १९०५ में मैंने प्रण किया था कि राधास्वामी मत पर चलने से या गुरु भक्ति से या साधन अभ्यास से जो मिलेगा वह बता जाऊँगा। यह सत्संग कराना मेरा अहसान नहीं, किन्तु आपके कारण मुझे अपने कर्म को भोगने का अवसर मिला क्योंकि यह मेरा प्रण था या मैंने ऐसी इच्छा प्रकट की थी।

मोती कैसे प्राप्त हो

अब सवाल है कि यह न घबराहटपना कैसे आया।

ब्रह्मा विष्णु महेसुर थाके, तिनहूँ खोज न पाया।
संकर सेस औ सारद हारे, पढ़ि रटि गुन बहु गाया।

कहने को तो कह दिया कि 'ब्रह्मा, विष्णु, महेश्वर थक गये,' मगर क्या खबर किस भाव से ऐसा कहा है। जो मैंने समझा वह कहता हूँ। ब्रह्मा रचना करने वाली, विष्णु पालन करने वाली और महेश संहार करने वाली शक्ति है। शास्त्रों में कहा है कि ब्रह्मा इन्द्री में ,विष्णु नाभि में

और शिव कंठ में वास करते हैं। बाहर के ब्रह्मा आदि तो देखे नहीं हैं। हाँ, बचपन में सुना हुआ था। साधना में विष्णु की मूर्त्ति सामने आ जाती थी तो उसे सत मानते थे। अब अनुभव ने सिद्ध किया कि यह मेरा अपना ख्याल (Imagination) था। आप लोगों की दया से उसका ज्ञान हो गया।

एक बार जब मैं राधा स्वामी धाम से वापिस आ रहा था तो इलाहाबाद में एक शख्स हजारीसिंह मिला। वह कुछ फल लाया। पूछा तू कौन है? उसने कहा 'क्या आप नहीं जानते। मैंने आपसे दहली में नाम लिया था। आज सुबह दो बजे आपने जगाया और कहा कि मैं आ रहा हूँ। मिल सकते हो। उसने और आगे बताया कि आपको प्रकाश में पद्म के फूल पर देखता हूँ और आप भाषण देते रहते हैं।' इसी तरह किसी को राम दिखाई देता है, किसी को कबीर, किसी को कोई, किसी को कोई। अभिप्राय यह कि यह वह ख्यालात हैं या वह संस्कार हैं जो आदमी के दिमाग पर पड़े हैं।

ऐ मानव! ***तुझे शान्ति या न घबराहटपन कब आयेगा? जब तुझे सच्ची समझ, विवेक ज्ञान मिल जायेगा।*** जब तक यह नहीं आता तू घबराता फिरेगा।

इसी सच्ची समझ, विवेक या ज्ञान की प्राप्ति के लिए तुम गुरु से सच्चा प्रेम करो। वह क्या है? सुनो? तुमने मुझे गुरु माना। जिनका घनिष्ट प्रेम है वह आवेश में आकर घर से भाग कर मुझसे मिलने की कोशिश करेंगें। सम्भव है वह घर का ताला भी बन्द करना भूल जाये। यह प्रेम अवश्य है मगर यह स्थूल देह का प्रेम है। असली प्रेम यह है कि किसी पूर्ण पुरुष के सत्संग में बैठकर उसकी बात सुनो और गुनो।

राधास्वामी मत में गुरु भक्ति यह है :-

सत्संगक रेव चनप ुनिस ुने ।स ुन-सुनक र ि नतम नम ेंग ुने॥
गुनि-गुनि काढ़ि लेय तिससारा। काढ़ि सार तब करे अहारा॥
करि अहार पुष्टि होय भाई। भव भौ भय सब गये नसाई॥
शास्त्रों में श्रवण, मनन और निदिध्यासन बताया गया है॥

मुझे इस बात की इच्छा नहीं कि मेरे सत्संग में हजारों की संख्या में लोग आवें किन्तु यह इच्छा है कि लोग उस अवस्था को प्राप्त कर जायें कि वह घबरायें नहीं। इसको कहते हैं अभय होना मगर जो घबरा जाये वह अभय नहीं हुआ। गुरु नानक ने भी इस मंजिल को निर्भय, निर्भी, अडोल कहा है।

वेदों और संतों का ध्येय एक है। इसके समझाने वाले नहीं और दुनिया समझने की जरूरत महसूस नहीं करती। इसलिये यह रहस्य गुप्त था। गुप्त का गुप्त रह गया। पंथ चलाने वालों ने गलत मान-प्रतिष्ठा के लिए असलियत को प्रकट नहीं किया और दुनिया ध्येय को प्राप्त न कर सकी।

इसलिये सच्चे पुरुषों के सत्संग की आवश्यकता है। उसके बिना विवेक नहीं होता।

तुलसीदास का कथन है :-

बिन सत्संग विवेक न होई।
राम कृपा बिना सुलभ न सोई॥

सत्पुरुष के सत्संग से समझ आती है, ज्ञान होता है, इसलिये संत मत में सत्संग की महिमा है।

मैं आपको अपने अनुभव के आधार सच्चा ज्ञान दे रहा हूँ। देखो! ब्रह्मा, विष्णु, महेश यह मन की तीन शक्तियाँ है जो सृष्टि की रचना करती, पालन करती और नाश करती हैं।

जब तक मनुष्य उत्पत्ति, स्थिति और प्रलय के बन्धन में फँसा है उसको शान्ति नहीं मिल सकती। तुम्हारी वृति हर समय किसी न किसी बात में फँसी रहती है। तुम किसी न किसी वस्तु को बनाते काम में लाते और तोड़ते रहते हो। तुम्हारे मन में संतान पैदा करने की इच्छा रहती है। संतान पैदा करते हो। क्या तुम सुखी हो? संतान वालों को पूछो कि संतान हो जाने से तुमको कोई कष्ट तो नहीं है? सुख ही सुख है या नहीं।

विष्णु का वास नाभि में है। उनका काम पालन करना है। क्या इसमें हमेशा सुख है? इसी प्रकार बिगाड़ने या नाश करने में भी सुख नहीं। इसलिये जब तक इनमें लगे हो वासना पैदा करते हो उस शक्ति को जिसका वर्णन पहिले किया है प्राप्त नहीं कर सकते इसलिये कबीर ने जो कहा है कि ब्रह्मा, विष्णु, महेश थक गये ठीक कहा है। जब तक सुरत इन तीनों बातों में यानी बनाने काम लेने और बिगाड़ने में फँसी है तुम शांति प्राप्त नहीं कर सकते।

देखो! उसके लिये लोग भजन-कीर्त्तन करते हैं। मंत्र-उच्चारण करते हैं। उन्हें उस समय आनन्द मिलता है मगर क्या वह घबराते नहीं? क्या उनकी वृति में विक्षेप नहीं आता? वे अपनी-अपनी रहनी को देखें। क्या इनमें घबराहट नहीं आती? मैं अपनी कहता हूँ कि यदि नहीं आती तो धन्य है। मैं बारह वर्ष साधन अभ्यास करता रहा। गुरु की आरतियाँ करता था। घुंघरू बाँधकर नाचता था। इतने पर भी जब गुरु ने इम्तहान लिया तो फेल हो गया। यह मेरे जीवन का अनुभव है।

संतो का मार्ग अभय पद प्राप्त करने का है। शिक्षा वही है, बात एक ही है मगर समय-समय पर इसमें परिवर्तन होता रहता है गुरु हमेशा चोला बदलता है। दुनिया यह समझती है कि एक गुरु मर गया। दूसरा उसकी जगह आकर बैठ गया। यह गलत है। गुरु नाम है ज्ञान का। गुरु का चोला बदलना यह है कि समयानुसार वह शिक्षा की वर्णन शैली बदल जाता है। पहिली शिक्षा के लिये नये शब्द प्रयोग करता है। इसलिये मैं खंडन नहीं करता किन्तु सार बात या सच्चाई को बयान कर देता हूँ।

दुनिया में एक ही कोटि के लोग नहीं हैं। विभिन्न श्रेणियों के हैं। बहुत से यथार्थ बात पसंद नहीं करते किन्तु रोचक बातों को पंसद करते हैं मगर आज के समय में अधिकतम लोग यथार्थ और तत्व बात (To the point) चाहते हैं। मैं भी माँग और पूर्ति (Demand and supply) के नियम के अनुसार वैसा ही कहता हूँ। जो समझें समझ जायें वर्ना कुछ दिन टक्कर खाने के बाद सही मार्ग पर आयेंगें।

'है तिल के तिल भीतर, बिरले साधू पाया है।'

यदि लोग सारे जीवन तिल में लगकर तिल में ही दाखिल होने की कोशिश करते रहें तो यह वस्तु नहीं मिल सकती जब तक पूर्ण पुरुष का सत्संग न मिले। बिना सत्संग के जितना अधिक अभ्यास करोगे उतने ही अधिक भ्रम उत्पन्न होंगे। तुम कहोगे कि मैं उल्टी बात कर रहा हूँ। मैं सच कह रहा हूँ क्योंकि मेरी समझ में यह आ गया है कि वह मोती क्या है और अब घबराता नहीं हूँ।

इसी बात के प्रकट करने के लिये राधास्वामी दयाल, सन्त कबीर तथा दूसरे सन्त प्रकट हुये। उन्होंने कहा कि तमाम दुनिया काल माया

के चक्र में फँसी है। यह जितने रूप अन्तर में प्रकट होते हैं यह तुम्हारी ही वासना के हैं। यह स्थूल होकर छाया रूप हो जाते हैं और दिखाई देने लगते हैं। हिन्दू शास्त्र उनको छाया पुरुष कहते हैं।

इस विषय पर एक दो घटनायें सुनाये देता हूँ ताकि बात समझ में आ जाये। मैं एक जगह गया। वहाँ का नाम नहीं कहना चाहता। वहाँ एक स्त्री दाता दयाल (महर्षि शिव) का ध्यान करती थी। उसने बताया कि उसमें प्रकाश पैदा होता है। दाता दयाल की मूर्त्ति प्रगट होती है। इतना प्रकाश होने पर गुरु मूर्त्ति प्रकट हुई और साथ ही एक मूर्त्ति और प्रगट हुई जो काम चेष्ठा रखती थी। यह बात क्या है? सुनो। ये जितने दृश्य तुम्हारे अंदर प्रगट होते हैं यह कुछ नहीं हैं, ये हैं संस्कारों का प्रभाव, जो जन्म-जन्मान्तरों से तुम्हारे चित्त पर पड़े हैं। अभ्यास के समय में ,स्वप्न में और अन्त समय में भी यदि ख्याल तथा संस्कार अच्छे पड़े हुये हैं तो अच्छे दृश्य दिखाई देंगे और यदि बुरे हैं तो बुरे दृष्य आवेंगे। काम, क्रोध लोभ, मोह और अहंकार आदि के जैसे-जैसे भाव विचार रहे हैं वही भाव विचार विभिन्न रूप बनाकर सामने आयेंगे। यदि प्रेम और भक्ति के भाव विचार रहे हैं तो वे गुरु का या इष्ट का रूप प्रगट करेंगे। चूंकि उस स्त्री में काम चेष्ठा थी, इसलिये वह ख्याल मुर्त्तिरूप में प्रगट हो गया। स्वप्न में भी काम भोग करते हो। जो कुछ यहाँ है वही अतंर है इसलिये सबसे पहिले मन के विचारों को शुद्ध करने की कोशिश करो।

दूसरी घटना सुनो। एक स्त्री ३०-४० वर्ष की है। व्यास की सत्संगी है। बाबा सावन सिंह (व्यास वाले) उसे शादी करने को कहते रहे मगर उसने शादी नहीं कराई। इसके बाद बाबा जगत सिंह जी आये और उन्होंने भी शादी को कहा मगर उम्र अधिक हो चुकी थी। हर बात का

समय होता है। रुपया कमाने का, शादी का, संतान उत्पन्न करने तथा भजन सा समय होता है। मैं इस रहस्य को जानता हूँ। अब उसकी शादी नहीं हो सकती थी क्योंकि उम्र अधिक हो गई थी। एक दिन मुझसे आकर कहती है कि स्वप्न में बाबा सावन सिंह व बाबा जगत सिंह आये। कहा-' काको! (उसका नाम था) हम तेरे लिये पति कहाँ से लायें! फिर आप भी आ गये। तो उन्होंने फिर आपकी शादी कर दी।' दुनिया के लोग भ्रम और अज्ञान में फँसे हैं। उनके भ्रम और अज्ञान को मिटाने को आया हूँ। मेरा नाम है परम दयाल। यह पद मुझे गुरु से मिला हुआ है। जितने सत्संगी है सबके सब अपने मनानन्द, काल और माया के चक्र में फँसे हैं। मेरी बजाय कोई और होता तो उस स्त्री के अज्ञान का फायदा उठाता।

एक और उदाहरण सुनो- सूरत सिंह एक सत्संगी है। मुझ से नाम ले गया। नाम ले जाना और बात है और मेरी बात समझना और है। इसलिये सत्संग पर जोर देता हूँ। यदि सारा ज्ञान रुपया देने से मिल जाता तो बिरला जैसे सेठ रुपया देकर संसार के चक्र से निकल जाते। यह दिल देने का विषय है। सुरत देने का काम है। गुरु देह का नाम नहीं है। गुरु है वाणी, वचन। वचनों के अनुसार न चलने से सुरत न लगाने से लोग मन के चक्र में भटकते रहते हैं। हाँ, तो जब राधास्वामी धाम में दाता दयाल (महर्षि शिव) की समाधि बन रही थी, सूरत सिंह के अंतर में मेरा रूप प्रगट हुआ और कहा कि राधास्वामी धाम में (५००) रु. भेज दो। उसने मुझे लिखा कि आपने स्वप्न में मुझे (५००) रु. समाधि के लिए भेजने को कहा है वह मैंने भेज दिये हैं, मगर उसके अन्तर में रुपया भेजने को कहने का मुझे कोई इल्म नहीं था। कुछ दिनों बाद

उसने कोई कुकर्म कर डाला जिसका बुरा प्रभाव पड़ा। उसने मुझे लिखा कि आपने अंतर प्रगट होकर (५००) रु. तो भिजवा दिये मगर जब बुरा काम मुझसे हुआ तो आप प्रगट नहीं हुये और मुझे उससे रोका नहीं। पागल हो गया। (२००-२५०) रु. तनख्वाह थी। इसी प्रकार अन्य पंथ वाले या गुरुभक्त इस मन के चक्र में आये हुये हैं। इस मन से बनाई हुई मूर्त्ति के प्रगट होने को ही सब कुछ समझ कर इससे निकल नहीं पाते। पंथ वाले पंथ के बंधनों में बँधे हुये हैं। डेरे धाम या मठ वाले उनसे नहीं निकल पा रहे। मैं यह काम इसलिये करता हूँ कि लोगों को असलियत का ज्ञान हो जाये। यह जो मैं कह रहा हूँ वही राधास्वामी दयाल की वाणी है।

यह अवस्था क्यों नहीं आती? इसलिये कि तुमको गुरु ज्ञान नहीं मिला। सत्संग प्राप्त नहीं हुआ। गुरु तत्व का अभाव हो गया।

गीता में कृष्ण भगवान ने कहा है कि जब-जब धर्म की हानि होती है तब-तब मैं प्रगट होता रहता हूँ।

यदा-यदा हि धर्मस्य ग्लानि भवति भारतः॥
अभ्यु त्थानम धर्मस्य तदाऽऽत्मानं सृजाम्यहम्

इसी प्रकार जब मानसिक अज्ञान संसार में फैलता है तो वह महान शक्ति संत रूप में आकर प्रकट होती है। इस समय संत सतगुरु वक्त फकीर के दिमाग में बैठकर यह भाषण दे रहा है। दुनिया चाहे जो कहे, अहंकारी कहे, बुरा कहे, मैं जिस काम को आया हूँ वह बिना किये वापिस नहीं जाऊँगा।

मेरा काम क्या है :-

तू तो आया नर देही में, धर फकीर का भेषा।
दुखी जीव को अंग लगाकर ले जा गुरु के देसा॥

तीन ताप से जीव दुखी हैं, निबल अबल अज्ञानी।
तेरा काम दया का भाई, नाम दान दे दानी॥

सत्संग में जो मेरे शब्द हैं वही नाम है। मैं मकान बंद करके मंत्र नहीं देता। सत्संग में जो मेरी बात समझ ले और समझ कर अमल में ले आवे उसका बेड़ा पार है: उसके प्रमाण में राधास्वामी दयाल की वाणी है :-

गुरु ने दीना भेद अगम का।
सुरत चली तज देश भरम का॥
बल पाया अब विरह मरम का।
भटकन छूटा दैरो[1] हरम[2] का॥

मैं सत्संग में उस ख्याल को देता हूँ जो संतों का असली ध्येय घर है तिल के तिल तिल के भीतर, बिरले साधू पाया है।

वह तिल के अन्दर बन्द नहीं है मगर दुनिया को तिल में दिखाई देता है। तुम समझते हो कि अंतर में बाबा फकीर बोला है और तुम उसको संत मानकर सन्तुष्ट होते रहते हो। इसे समझने में गलती है। मैं इस राज (रहस्य) को प्रकट कर रहा हूँ। जो मेरे वचनों की मारधाड़ सह गया उसका बेड़ा पार है। कोई-कोई साधु होता है जो इस रहस्य का ज्ञाता होता है।

साधन की श्रेणियाँ

'चहुँ दल कंवल त्रिकुटी साजे, ओंकार दरसाया है।

उस मोची को पाने के लिये कबीर ने कहा है कि यह रास्ता है। उसकी श्रेणियाँ सहस्रदल कंवल, त्रिकुटी, सुन्न, महासुन्न, भंवरगुफा,

---

1. मंदिर 2. मक्का

सतलोक ,व अलख अगम व अनामी हैं। सहस्रदल कंवल क्या है? तुम्हारे अंतर में अनेक प्रकार के ख्यालों का उठना और उनमें फँसे रहना। बहुत अन्तर में फकीर को गुरु मानकर बातें करते हैं और वह रूप दावा बताता है। किसी को वह रूप कहता है कि 500/ रु. धाम को भेज दो। इस प्रकार के ख्यालात का उठना अनेकवाद है। यदि आदमी इसी में फँसा रहा तो उस अवस्था को प्राप्त नहीं कर सकता। यदि मेरे रूप के प्रकट हो जाने मात्र से ही मनुष्य का काम बन जाता होता तो फिर वह अशान्त न होना चाहिये मगर फिर भी वह अशान्त रहता है।

मेरे रूप के प्रगट हो जाने से इसी को सत मानना भ्रम है अज्ञान है।

उस उच्च अवस्था को प्राप्त करने को किसी पूर्ण पुरुष का सत्संग परम आवश्यक है। अधिकारी और समझदार को सत्संग में वह अवस्था आ जाती है। (सत्संग में वचनों को पूर्ण ध्यान से सुनो। तुम्हारी आँख मेरी शक्ल पर रहनी चाहिये।)

मैंने बड़ा अभ्यास किया है और अब भी करता हूँ। क्या मैं सहस्रदल कंवल की अवस्था में नहीं आता? क्या त्रिकुटी नहीं बनती? मैं अब भी इन अवस्थाओं में आता हूँ मगर पहिले की अवस्था में और अब की अवस्था में अंतर है। पहिले फँसाव था अब नहीं है। यह एक राज (भेद) है जो आप को अच्छी तरह हृदयाँकित कर लेना चाहिये। कहा है-

गुरु मिले तब कहा कमाना।

जब गुरु मिल गया, समझ आ गई, ज्ञान हो गया फिर कमाई की आवश्यकता नहीं रहती, मगर मैं था बुद्धि का मोटा। इसलिये दूसरों को

भी वैसा ही समझता हूँ। विवश दूसरों को समझाने को कठोर शब्द प्रयोग करता हूँ। अष्टांग योग की बाबत जो शब्द मेरे नाम लिखा है वह मेरी समझ में नहीं आता था। रोचक और भयानक बातें थी। उनमें फँसा था।

मनुष्य जब अभ्यास करता है तो अनेक बार (सहस्रदलकंवल) से प्रारम्भ करता है। जब वृति वहाँ से हट जाती है तो उसके आगे का शब्द होने लगता है। अभ्यास के विषयों में अपने जीवन का अनुभव अक्टूबर १९६२ के मनुष्य बनो और शिव मासिक पत्र के जनवरी ६४ के अंक में लिखा है। ये शब्द घंटा शंख आदि के क्यों होते है इनको स्पष्ट रूप से वर्णन कर दिया है। स्पष्ट वर्णन या पर्दा उघाड़ देने में हानि भी है। इससे पंथ नहीं रहता मगर मैंने पंथ का मंडल नहीं बनाया। मेरा कहना है कि इंसान बन के जाओ। अलग पंथ और सोसायटी क्यों बनाते हो। घर को ही सोसायटी क्यों नहीं बनाते। अपना धन महात्माओं को क्यों देते हो? कुदरत ने जिनको तुम्हारे साथ लगाया है उनको क्यों नहीं देते? यदि मेरे इस एक सिद्धान्त को मान लिया जाये तो कोई गरीब नहीं रह सकता। यदि मैं प्रधानमंत्री होता तो यह आवाज देता कि हर एक अपने घर को पाले। मैं तुम्हारे हित को आया हूँ। तुम्हारे हित की बातें कहता हूँ। इंसान बनो। यह दुनिया तो लूटने वाली है। इसके फँसाव में न आओ। इस लूट के विषय पर दाता दयाल (महर्षि शिव) का शब्द है :-

जगत में कैसी लूट पड़ी।

माता कहे पूत है मेरा, भाई-भाई बनावे।
घर की तिरिया तन से लिपटी, पति कह रार मचावे॥

बहिन वीर कह हंस मुसकावे, मुस के धन ले जावे।
पुत्र वधू कहे ससुर सयाना, झूठे भाव दिखावे॥

राजा कहे मेरी है परजा, करत कमाई उद्यम।
मक्खन काढ़ मुझे दे उत्तम, पिये छाछ नित मध्यम॥

पंडित दान दक्षिणा माँगे, साधू भिक्षा धारी।
तीरथ मठ मूरत और मंदिर, लूटें लूट की बारी॥

मरते समय आग यह बोली, इसे जला खा जाऊँ।
मिट्टी कहे गाढ़ दे मुझ में, अपना अंश बनाऊँ॥

हवा सुखावे पानी घुलावे, सिमटावे आकाशा।
चकित हुआ यह देख के लीला,लूट का अजब तमाशा॥

मैं हूँ कौन-कौन है मेरा, इसकी समझ न पाई।
देख लूट का जग विस्तारा, लूट हुई दुखदाई॥

कभी-कभी भूल भरम में फँस कर,आप लुटूँ लुटवाऊँ।
लूट-लूट के लुट गया सारा, लूट का मरम न पाऊँ॥

राधास्वामी की संगत पाई, समझ लूट की आई।
व्याकुल चित चरनों में आया, ली सतगुरु शरनाई॥

एक तो व्यवहार में लूट। एक गुरु तत्व को न जानते हुए जो दृश्य अन्तर में पैदा होते हैं उनके कारण भी लोग लुट जाते हैं। मैं भी लुट गया था, मगर लूटने वाला नहीं मिला। मेरा ही अपना स्वप्न था। मन की खोज थी जो दाता दयाल (महर्षि शिव) के पास ले गई। वहाँ, तन, धन दियाम गरउ न्होंनेल ूटान हीं।इ सम ।मलेम ेंउ नकीअ ।ज्ञाक ।भ ी उल्लंघन किया करता था। यह मेरे मन का भाव था जो वहाँ लिए जाता था। सन् १९२१ ई. में आरती करने गया। चाँदी का सिंहासन, सुनहरी

पोशाक आदि ले गया। दूसरे जो इतना सामान ले जाते हैं उनका आदर होता है और मुझे लताड़ पड़ी। उस समय जो शब्द मेरे नाम लिखा उससे आप को मेरी बात की पुष्टि हो जायगी। वह शब्द यह है :-

चेत-चेत-चेत अभी, अभी चेत मेरे भाई॥ टेक॥
राह से कुराह भया, भूला भरमाना।
कहाँ बसे कहाँ नसे, ठौर ना ठिकाना॥ चेत०

संगी नाहिं साथी नाहिं, कोई ना सहाई।
ताक में हैं चोर डाकू, कोई ना सहाई॥ चेत०

सोया सो पूंजी खोया, पूंजी खोय रोया।
फल पाया आप बुरा, जैसा बीज बोया॥ चेत०

यह तो नहीं तेरा देस, देस है बिगाना।
यहाँ सब बेगाने बसें, कोई ना येगाना॥ चेत०

गुरु ने उपदेश दिया, और मुझे चिताया।
सत पंथ धार हिये, कटे मोह माया॥ चेत०

लूट पड़ी लूट ले, बचाले धन अपना।
सह न काल करम चोट, सोध ले मन अपना॥ चेत०

राधास्वामी संतरूप, तेरे हैं सहाई।
उनकी ओर ध्यान लगा, ले चरण शरनाई॥ चेत०

द्वितीय प्रवचन(२८-१-६४)

जो मेरी समझ में आया है वह कहता हूँ मगर मैं ऊँचा बोलता हूँ। साधारण लोग मेरी बात नहीं समझ सकते। वह ऐसे समझो जैसे कि आप बूढ़े हैं। आप बच्चों का खेल-खेल नहीं सकते। इसी प्रकार मेरी दशा है। मुझसे अब अ, ई नहीं कही जाती।

मोती क्या है?

मेरी नजर में मोती आया है। वह मोती क्या है? मैंने जो समझा वह कहा। वह है अडोल गति, अभयगति, निबैरगति, परमशान्ति की अवस्था। इसी की खोज सारी दुनिया जाने या अनजाने करती रहती है। सवाल है कि वह गति या वह अवस्था मिलती कैसे है?

है तिलके तिल भीतर, विरले साधू पाया है।

वह अभय गति या अडोलगति जब भी किसी को मिलती है तिल के भीतर मिलती है। तिल दोनों आँखों के बीच में स्थान है। इसको योग की भाषा में तीसरा तिल बोलते हैं। उसमें हमारा जो जीवन है उसके अहसासात (भान बोध) रहते हैं। शरीर को पीड़ा होती है या चींटी काटती है या घाव में कष्ट होता है तो नाड़ी संस्थान (Nervous System) तुरन्त दिमाग को पता देता है। हमारे दुख-सुख के जो भान बोध हैं उनका केन्द्र(Centre) यह तिल है। वैद्य या डाक्टरी विज्ञान (Medical Science)भ ीय हीक हतीह ै ि कय हाँम ानसिकक े न्द्र (Mental Centre)है। संतों के यहाँ भी वही बात है। मैडिकल साइंस में दिमाग के दो भाग हैं- (१) भूरा (२) स्वेत। भूरे भाग में खास-खास सूक्ष्म भाग (Cells) बने हुये हैं। डाक्टरों के सिद्धान्त के अनुसार जब बच्चा पैदा होता है तो उसका खून का दौरा ज्यों-ज्यों अधिक हरकत

करता है और वह दौरा जब इन सूक्ष्म भागों (Cells) से गुजरता है, वह उनको मिलाता रहता है। उस समय छोटे बच्चों में बुद्धि (Sense) नहीं होती। जैसे-जैसे बच्चा बढ़ता है यह सूक्ष्म भाग (Cells) बढ़ते जाते हैं यह जो साधन सुरत शब्द का किया जाता है इससे सिर के अन्दर खून के दौरे नियमित(Regulate) हो जाने से जो सूक्ष्म भाग (Cells) हैं जो खास-खास गुण रखते हैं। वह अपने अन्दर विकसित (Develope) हो जाते हैं और समता आ जाती है। हर एक सूक्ष्म भाग(Cell)खास-खास काम करने को बनाये गये हैं। जब हमारी सुरत वहाँ जाती है अथवा जिस स्थान का दौरा अधिक करे वह सूक्ष्म भाग विकसित (Develop) होते हैं तो हमारे अन्दर वैसे-वैसे अहसास (भाव विचार) पैदा होते रहते हैं। यह हमारे जीवन की गढ़त का खेल है। डाक्टरी विज्ञान(Medical Science) भी यही कहता है। यही कबीर या अन्य संत कहते हैं। वह अडोलपना, निर्भयता, बेफिक्री तुम्हारे दिमाग के अन्दर सूक्ष्म भागों(Cells) में पारस्परिक एकता(Coordination) का होना है।

हम इस शान्ति प्राप्त करने के लिए क्या करते हैं? कोई जप, तप, सन्ध्या, तीर्थ व्रत, दान आदि करते हैं। कोई अपने कल्पित रूप से अपने आपको कुछ समझता रहता है। कोई अपने को 'अहंब्रह्म' कहता है मगर अपने क्रियात्मक जीवन में या रहनी में दुख-सुख उठाता है, शान्ति प्राप्त नहीं कर पाता। इसके समर्थन में आप प्रमाण माँगोगे। इसका प्रमाण है कुछ अपना अनुभव ,कुछ दूसरों का अनुभव। मुझे याद है कि जब मैं सुनाम स्टेशन पर था तो एक वेदान्ती साधु मेरे पास आया। मैंने उसे नमस्कार किया। उसने कहा कि किस को नमस्कार करता है। तब मैंने उसकी बातों से समझा कि यह केवल कल्पना से वेदान्ती है। साधन

सम्पन्न (असली) वेदान्ती नहीं है। ७-८ महीने बाद वह फिर आया। मैं काम कर रहा था। वह रो पड़ा? कहा दर्दे गुर्दा है। ठीक नहीं हुआ। अमृतसर जाना है मदद कर दो। दो माह बाद फिर किसी ने उसको गाड़ी से खींच कर बाहर निकाला। देखा वही साधु है। बोल नहीं सकता था। मैंने कहा नमस्कार करता हूँ। वह उत्तर तो न दे सका मगर आँखों से आँसू बहने लगे। कहने का भाव यह है कि केवल कल्पना या विचार से कुछ मान लेने से काम नहीं बनता। वह दुख-सुख से नहीं बच सकता।

इससे सिद्ध होता है कि जब तक सुरत हमारी खोपड़ी के भूरे भाग के सूक्ष अङ्गों Cells में नहीं जाती तब तक शान्ति (peace of mind) नहीं आ सकती। चाहे लैक्चर दो, चाहे वाणी पढ़ो, चाहे वेद पढ़ो, असली जीवन की जो समता है, अन्तर में बिना जाये नहीं आ सकती।

कुछ दिन हुये मुझे बाजू में कहीं दर्द हुई। मैंने लाख कोशिश की कि दर्द चला जाये। सुमिरन किया। दाता दयाल का रूप भी बाँधा मगर दर्द नहीं गया। ख्याल आया फकीर इतना नाम जपा, कि उम्र व्यतीत हो चुकी। इससे तू दुख से न बच सका। मैंने अन्धविश्वास से किसी बात को नहीं माना। मैं रिसर्चर हूँ मगर मेरा एक अन्धविश्वास था कि दाता दयाल (महर्षि शिव) के रूप में उस मालिक परमतत्व को मानना था। फिर शब्द प्रकाश खुला। उसमें चला गया। होश नहीं रहा। सुबह उठा। दर्द गायब। यह मेरे जीवन का अनुभव है। इसलिए मैं संत मत को मानता हूँ। यही कबीर ने कहा है।

फिर उस अवस्था को प्राप्ति का क्या तरीका है?

चहुँ दल कंवल त्रिकुटी साजे, ओंकार दर्साया हैं।
रंकार पद सेत सुन्न मध, षट दल कंवल बताया है॥

पहिले सहस्र दल कंवल बता दिया गया। उसके बाद त्रिकुटी का स्थान है। विद्वत्ता की बात कहनी और बात है, मगर मैं अमली पहलू से बताता हूँ। तुम किसी विचार में लीन हो अथवा ऐसी दशा में हो जब किसी चेष्टा का ध्यान नहीं रहता अथवा पूर्ण ध्यान से किसी काम को करते हो तो बाकी दुनिया को भूल जाते हो। दुनिया को भूल जाने अथवा अपने मन की वृति को किसी विशेष बिन्दू पर गाढ़ देने का नाम है त्रिकुटी। मन की वृति का एक ख्याल में लगकर बाकी ख्यालों को भूल जाना ही त्रिकुटी है। बिल्कुल सुगम है। यह जरूरी नहीं कि गुरु प्रेम से ही त्रिकुटी मिले। तुम किसी ख्याल को ले लो। चाहे किसी सम्प्रदाय के हो, चाहें किसी पंथ के हो जब वृति उस ख्याल पर पूर्ण रूप से जम जायेगी बाकी चीजों को भूल जाओगे। शारीरिक भान बोध को भूल जाओगे। अपने ख्याल को या वित्त की वृति को एक जगह लगाने से शारीरिक भान बोध को भूल जाना ही त्रिकुटी है। यह मेरा निज अनुभव है।

त्रिकुटी को पहुँचने से पहिले एक और अवस्था आती है जिस का नाम सहस्रदल कंवल है, जिसका वर्णन पहिले भी किया जा चुका है। वह अवस्था है अनेकवाद। उस अवस्था में तुम्हारे मन में अनेक विचार उठते रहते हैं। जब तुम अभ्यास में बैठते हो तब कल्पित रूप बनाते रहते हो। उनके साथ बातें करते रहते हो अथवा अन्तर में ठहर कर अपने दुनियावी दुख-सुख परमार्थ या धार्मिक मसले हल करते रहते हो और इस प्रकार अनेक विचार आते रहते हैं। विचारों की झड़ी लग जाती है। माना कि किसी ने मेरा ध्यान किया तो कोई दाढ़ी बनायेगा, कोई मुँह का रूप बनायेगा, कोई आँख को बनायेगा। फिर उससे बातें करेगा। सोचेगा कि बाबा ने अमुक बात कही थी। मैं कभी राम का ध्यान करता

था, कभी धनुष धारी राम को रूप बनाकर उनसे प्रेम करता था। कभी वह रूप-आगे-आगे राम चलत हैं पीछे सीता माई, बनाता था। आदि-आदि।

धार्मिक जगत वाले या सांसारिक कामना वाले किसी ध्येय को लेकर जब तक ख्याल पैदा करते हैं जब तक उस ध्येय से जुड़ नहीं जाते। उस जुड़ने से पहिली अवस्था का नाम है सहस्रदल कंवल अर्थात् अनेक वृति वाली अवस्था। यदि ध्येय के विरुद्ध विचार उठते हैं तो उनको कह देते हैं गुनावन अर्थात् व्यर्थ के विचार उठना। ये ही हमारे दुख का कारण बन जाते हैं। यह इस प्रकार समझ लो जैसे कि लड़का पढ़ता है। पढ़ाई में मन लगता। मन किसी दूसरी ओर जाता है। इसका अथवा सहस्रदल कंवल से निकलने का इलाज है सुमिरन। जो नाम तुमको दिया गया है अर्थात् जो वर्णात्मक नाम बताया गया है उसका सुमिरन। जब तुम्हारा मन ध्येय के विपरीत ख्याल उठावे तो बताये हुये नाम का सुमिरन करो

उस शान्ति के प्राप्त करने के लिये तिल के रास्ते से अन्तर में जाना पड़ता है। बिना सुमिरन के उसको प्राप्त नहीं कर सकते। इसके प्राप्त करनेक ोम ैंनेज ीवनख ो ि दया ास ंतोंन े उ सकीप्र ाप्तिक ोब ताया सुमिरन। क्या सुमिरन? बिना जुबान हिलाये अपने ख्याल के साथ नाम का जाप। इससे तुम्हारे मन के जो व्यर्थ के संकल्प विकल्प उठते हैं, रोक लग जायेगी। सोच समझ कर सुमिरन करो। अनाप-शनाप सुमिरन से शान्ति (तसकीने कलव) नहीं मिलेगी, या ध्येय की पूर्त्ति नहीं होगी। जो ध्येय है उसको शब्द या रूप द्वारा याद करने का नाम है सुमिरन। जीवन की अनेक जरूरतें हैं। हर एक वासना के ध्येय की प्राप्ति को ऋषियों ने या सनातम धर्म में अलग-अलग नाम और अलग

रूप बताये हैं। संतों का जो सतनाम या राधा स्वामी नाम है यह केवल जन्म-मरन से बचने के ध्येय से है। दुनिया की जरूरतों के और नाम हैं तथा और रूप हैं मगर संत मत में ध्येय की प्राप्ति को संतों के बताये हुए नाम का सुमिरन है और सनातन में अनेक तरह के नाम और रूप देकर ध्येय की प्राप्ति के साधन बताये हैं।

जिनकाम नन हींल गताथ ात ोद ाताद याल(महर्षि शिव)न े सर्वसाधारण को नाम माला बताई थी। किसी-किसी को त्राटक और कई को नाक की नोक (अग्रिम भाग) पर ध्यान जमाना बता गये। यह सब प्रकृति के अनुसार बताये जाते हैं। प्रवृति मार्ग के लिए अनेक उपाय हैं। अधिकतर ज्योति का ध्यान बताया जाता है। इसलिए जो नाम और तरीका गुरु बताता है, उस पर चलना चाहिए। इसका प्रमाण क्या है?

मेरा मन बड़ा चंचल था। मैंने नाम लेने पर ९ साल तक कोशिश की कि मन अन्तर में ठहरे मगर नहीं ठहरा। यह मैं अपनी कमजोरियाँ बता रहा हूँ। लोग अपने मन के चिट्ठे को बताते नहीं। मैं एक बार लाहौर गया। वहाँ सत्संग था, मन गंदा हो रहा था। लाख कोशिश करने पर रुकता नहीं था। ऐसी दशा अनेकों पर आती होगी। अब ख्याल आता है दाता दयाल ने बड़ी बुद्धिमानी से काम लिया। कहा-सत्संग में मन शुद्ध रखा करो वर्ना वातावरण खराब होता है परन्तु फिर भी मन काबू नहीं आया। फिर कहा-फ़कीर! तुमको कह रहा हूँ। मगर मन फिर भी काबू में नहीं आया। फिर कहा फकीर को उठाकर जूते मारो। विष्णु दिगम्बर वहाँ थे। उन्होंने पकड़ लिया। कहने का अभिप्राय यह कि मन को रोकना आसान काम नहीं। कबीर साहब ने इसको महा जालिम (अत्याचारी) बताया है।

उनका शब्द है :-

साधो यह मन है बड़ा जालिम ॥
जाको मन से काम परो है, तिसही ह्वै है मालुम ॥ १ ॥
मन कारन जो उनको छाया, तेहि छाया में अटके।
निरगुन सरगुन मन की बाजी, खरे सयाने भटके ॥ २ ॥
मन ही चौदह लोक बनाया, पाँच तत्व गुन कीन्हे।
तीन लोक जीवन बस कीन्हे,पैर न काहू चीन्हे ॥३ ॥
जो कोऊ कहे हम मन को मारा, जा के रूप न रेखा।
छिन-छिन में कितनों रंग लावै,जे सपनेहु नहिं देखा ॥ ४ ॥
रसातल इकइस ब्रह्मण्डा, सब पर अदल चलावै।
षट रस में भोगी मन राजा, सो कैसे कै पावे ॥ ५ ॥
सबके ऊपर नाम निहच्छर, तहं लै मन को राखै।
तब मन की गति जान परै यह, सत कबीर मुख भाखै ॥ ६ ॥

तो इस मन के विचारों को रोकने के लिए सुमिरन ध्यान है। यह सहस्रदल कंवल, त्रिकुटी, सुन्न, महासुन्न, भंवर गुफा आदि जितने दर्जे हैं सब मन के हैं। कोई यह कहे कि त्रिकुटी में अभ्यास करके मन पर सदा के लिए काबू पा जायेगा, मेरे अनुभव में नहीं आया।

कबीर साहब और राधास्वामी दयाल की वाणी इसका समर्थन करती है। इसलिए जो स्वामी जी ने तथा कबीर ने कहा है ठीक है।

मैंने त्रिकुटी में अभ्यास किया। दाता दयाल का रूप प्रगट किया। उसमें आनन्द लिया मगर उसी मन ने मुझ से मजबूरन ऐसे ख्याल उठवायें जिनको मैं नहीं चाहता था। यह मेरे जीवन का अनुभव है। अपना कच्चा चिट्ठा बताकर सत्संग करा रहा हूँ ताकि जो शाँति के जिज्ञासु हैं। उनकी समझ में मेरी बात आ जाये।

मनुष्य लाख घंटा या ओंकार की धुनि सुनकर यह कहे कि मन सदा दुख-सुख का कारण नहीं बनेगा, मेरे अनुभव में नहीं आया। इस मार्ग के महात्मा लोग तथा बड़े-बड़े अभ्यासी अपनी-अपनी रहनी को देखें और कहें कि मेरा कहना कहाँ तक सच है। बड़े-बड़े तपस्वी भी ऐसे गिरते हैं कि कोई हिसाब नहीं। शास्त्र कहते हैं कि विश्वामित्र को मेनका ने छला। वह गिर गए। मेरे जैसे भी मान को सत्संग कराते हैं अपना असली जीवन पेश नहीं करते। केवल पुस्तकों के आधार पर सत्संग कराते हैं।

जो तिल के तिल भीतर जाना चाहे उसको मन के स्वभाव का तजुर्बा होना अनिवार्य है। जब तक मनुष्य मन के थपेड़े नहीं खा लेगा, अथवा मन की स्थिति का तजुर्बा नहीं है जायेगा, वह आगे जा नहीं सकता।

मैं महसूस करता हूँ कि ऊँची बात को आप लोग नहीं समझ सकते। यदि न बताऊँ तो नतीजा यह है कि आज राधास्वामी मत को १०१ वर्ष हो गये और लोग नाम जपते हैं, अभ्यास करते आ रहे हैं मगर बड़े पुराने सत्संगी जो मुझे मिलते हैं वह कहते हैं कि उम्र खोदी और कुछ नहीं मिला। यदि किसी को कुछ मिला तो इतना कि किसी में बाबा सांवले शाह प्रगट हुए या किसी में गुरु प्रगट हुए। किसी में गोपाल का रूप प्रगट हुआ। कोई बात अन्तर में कह दी या दवा बता गया। इससे क्या हुआ! केवल यह कि उसे सहारा मिल गया या उत्साह बढ़ गया, मगर इसमें सत्यता नहीं है। यदि वही रूप सब कुछ होता तो शान्ति मिल जाती। गोपालदास मेरी स्त्री को फूँक कर आया। रोने लगा। कहता है माता जी बैठी हैं बोलती नहीं। इसके अन्दर मेरा रूप प्रगट होता है और शब्द का प्रकाश भी होता है। यदि यही सब कुछ होता तो ढायें मार कर

क्यों रोता। मैं खोल-खोल कर वह बातें बता रहा हूँ कि तुम्हारी उलझनें दूर हो जाये और तुमको इस जीवन में ही परम शान्ति (peace) मिल जाये। (शब्द वही फिर पढ़ा गया)

है तिलके-तिलके तिल भीतर, बिरले साधू पाया है।

....

ररंकार पद सेत सुन्न मध, षट दल कंवल बताया है।

तिल के अंदर क्या है? तुम्हारे मन के संकल्पों का उठना। मन के रोकने को सुमिरन है। मन को ठहराने को ध्यान है। मन के निकलने को प्रकाश का साधन है। ब्रह्म का देश है। यदि प्रकाश अन्तर में पैदा भी कर लिया तब भी शान्ति जब मिलेगी जब अपने अंतर में जाकर अनुभव होगा। जब तक अभ्यास के बाद ज्ञान नहीं होता, अनुभव नहीं होता। स्थायी शान्ति मिलना असम्भव है। मैंने बड़े-बड़े साधुओं को देखा है जिनमें प्रकाश होता है मगर फिर भी अशान्त है। इसलिये संत मत में शान्ति के लिये कहा गया है- मोक्षमूलम् गुरु कृपा। मरने के बाद मोक्ष मिलती है वह निरी कल्पना (Theory) है। मुझे जीवन में मोक्ष प्राप्त है मगर मर कर नहीं देखा। मोक्ष का अर्थ यह है कि हमारे जितने संकल्प-विकल्प व भाव उठते हैं इन्हें माया समझकर इनमें न फँसना। इन्हें सत न मानना। यही मोक्ष है। यह मेरी समझ में आया है। मैं अमली पहलू का सत्संग करा रहा हूँ। पुस्तकीय ज्ञान के आधार पर नहीं किन्तु निज अनुभव के आधार पर कह रहा हूँ।

मुझे शान्ति कहाँ मिली? वह आप लोगों ने दिलाई। आप मेरे लिये असली संत सतगुरु है। दाता दयाल ने आपका रूप धारण करके मेरा बेड़ा पार किया। वह कैसे? वह इस तरह कि मैं तो आपके अन्दर जाता नहीं तो मुझे पूर्ण निश्चय हो गया कि जितने ख्याल मन के अन्दर होते थे

वह मेरे मन के चक्र से होते थे। मैं उन्हें सत मानकर उनमें फँसा रहता था। चूंकि वह मेरे विचार थे उन्हें अब माया समझ लिया है। यह माया अब मुझे फँसाती नहीं है। जब तक हम माया देश में हैं वह काम करेगी मगर अब माया मुझे फँसाती नहीं। आज दाता दयाल (महर्षि शिव) का रूप प्रगट हो गया तो कोई खुशी नहीं होती। कोई विपरीत ख्याल भी आता है जिसे मैं नहीं चाहता, तो चूंकि मुझे ज्ञान हो गया है कि यह मेरी ही प्रकृति के अनुसार होगा या बाहरी ख्याल होगा इसलिए यह माया मुझे फँसा नहीं सकती। यह मेरी शान्ति का मुख्य कारण है।

सुमिरन करने से, ध्यान करने से तथा ररंकार धुनि सुनने से मुझे मानसिक आनन्द मिला, ऋद्धि सिद्धि शक्ति आ गई, क्योंकि यह ख्याल की या संकल्प की शक्ति है। इससे इच्छा शक्ति (Will Power) बलवान हो गई।

फिर सुमिरन ध्यान से लाभ क्या?

इसका लाभ यह है कि एक तो तुम मन के चक्र से बचोगे। दूसरे तुम्हारी इच्छा शक्ति बढ़ जायगी। तुम जैसा-जैसा सोचते रहोगे, वैसा-वैसा होता रहेगा।

तो मोती क्या चीज है? जो मैंने समझा है वह कहता हूँ कि अपनी दुनिया के ख्याल से (संकल्प) से बेहतर बनाना। अपने संकल्प को ठीक बनाना। काम आया कर दिया। फिर भूल गये अर्थात उसका कोई प्रभाव तुम पर न रहे। कबीर ने मोती को क्या समझा उसे वह जाने।

सवाल किया जा सकता है कि उस मोती को प्राप्त करने को क्या करना है। उसके लिये सुमिरन ध्यान करना है। मैं नहीं कहता कि तुम राधास्वामी नाम का सुमिरन करो या राम नाम का सुमिरन करो। मैं

राधास्वामी पंथ में आकर उसमें फँसा नहीं हूँ। मैं पंथ के जाल में फँस कर मर जाऊँगा तो फिर जन्म लेना पड़ेगा क्योंकि पंथ से बँध गया। दातादयाल (महर्षि शिव) ने पिछली अवस्था मे नैय्यर (श्री मोहनलाल नैय्यर देहली) को लिखा था कि नैय्यर! तुम ही कहते हो मुझे राधास्वामी। (इससे प्रगट होता है कि उस अवस्था में पहुँचकर राधास्वामी पंथ से बँधे हुये नहीं रहे।) पंथ से स्वतंत्र होने के लिये या स्वतंत्रता की अवस्था में आने के लिये पहिले पंथ में बँधना पड़ेगा। जब तक बँधते नहीं स्वतंत्र नहीं हो सकते। दाता दयाल पहिले हजूर महाराज (हजूर राय सालिगराय साहब) के जाल में फँसे कि नहीं? राधा स्वामी मत का प्रचार किया। मैं यह नहीं कहता कि पंथ में न आओ। नहीं, किन्तु मेरा अभिप्राय है कि पंथ में फँसो नहीं। सत्संग में रात (भेद) को समझ लो। फिर कुछ नहीं करना है। केवल मन को संभालना है। सुमिरन ध्यान करते रहो। मन की निरख परख करते रहो। मगर साथ ही साथ जो कष्ट होगा अथवा जो कठिनाई आयेगी, तो मेरे सत्संग के बाद तुम उससे घबराओगे नहीं। बात को समझ लो। यदि समझ में आ जाये तो विक्षेप दुखदाई नहीं होगे।

मैंने अपनी आपत्तियों का हल जो मुझ पर आई, दाता दयाल से किया। उसके बाद आप लोगों से किया। यह मैं दीनता सा नहीं कह रहा। कहा है:-

गुरु बतावें साध को साधु कहे मुझे पूज।
अर्श पर्श के मेल के मेल से, बूझी बूझ अबूझ॥

मैं दाता दयाल को तंग किया करता था। उन्हीं को सब कुछ मान कर उनके पीछे पड़ा रहता था। घंटे दो-दो घंटे रोया करता।

उन्होंने मेरी कमी को दूर करने को या मेरे कल्याण को मुझे सतगुरु की पदवी दे दी।

मन की हालत बड़ी विचित्र है। इसका इलाज है सत्संग। मन में विक्षेप बढ़े तो सुमिरन ध्यान में लग जाओ। ऐसे लोगों को जो अभी प्रारम्भिक अवस्था में हैं उनको सोते, उठते बैठते मन की निरख-परख करते रहना चाहिये। यदि मन ऊट-पटांग सोचे तो सुमिरन ध्यान में लग जाना चाहिये। सिवाय इसके और कोई इलाज नहीं है। मैं अब भी करता हूँ। इतना चढ़ने पर भी जीव दशा में मेरा मन अब भी संकल्प उठाता है। बहुत से लोगों का कहना है कि मन को मार दो मगर उनका यह कहना केवल कथन ही कथन है वाचक ज्ञान है। देखो! यह शरीर है। इसमें दिल (Heart) चलता है। यदि यह न चले तो आदमी मर जाये। हमको हृदय की गति को नियमित (Regularise) करना है। न थोड़ा चले न अधिक। दोनों हालतों में दुख होगा। इसी प्रकार हमारा मन है। जब तक जीवन है मन चलेगा। यदि मन न हो तो संसार का कोई भी काम नहीं हो सकता। देखना यह है कि यह मन चंचल न हो जाये और न ही कुंद हो जाये। जो स्वभाव हृदय का है वही मन का है।

हृदय रोग के लिये वैद्यक या डाक्टरी में औषधि बताई गई हैं। मन को रोगों से दूर करने की संतों ने दवा बताई है। वह दवा है:-सुमिरन और ध्यान। यह है मोती जो मेरी समझ में आया है।

यह तो कंवल हैं यह सुषुम्ना आदि नाड़ी होती हैं। उन कंवलों को ढूंढते-ढूंढते उम्र गुजर गई। हमारी देह में विभिन्न चक्र हैं। गुदा का, पेशाब का, नाभिका, हृदय का, कंठ का आदि-आदि। जब खाँसी आती है बलगम स्वत: ही मुँह से निकल जाता है। पेशाब आता है तो पेशाब की इन्द्री से निकलता है। इसी तरह और भी समझ लो।

हमारे मन के विचारों की भी नाड़ी हैं ईड़ा, पिंगला और सुषुम्ना जिनका विचार घृणा, द्वेष, स्वार्थ परता आदि का है तो उनका विचार जब दिमाग में जायेगा वह बाँई या ईड़ा नाड़ी से जायेगा। जिनका विचार शुभ कल्याणकारी है, उनका विचार जब मस्तिष्क में जायेगा तो दाँई यानी पिंगला नाड़ी से जायेगा। जिनका विचार न शुभ है, न अशुभ, केवल शान्ति की इच्छा है वह विचार सुषुम्ना नाड़ी के रास्ते से जायेगा। जो लोग इस खोज में हैं कि सुषम्ना में होकर या ईडा पिंगला में होकर कैसे जायें, वे भ्रम में हैं अनजान हैं। यदि मनुष्य अपनी वासना को ठीक कर ले तो स्वत: ही इन दूर्जों से गुजर जायगा। दुनिया व्यर्थ कंवलों और नाड़ियों के जाल में फँसी है।

सहस्रदल कंवल के चक्र पर कोई फूल तो है नहीं जिस पर पंखुड़ी लगी हों। मन में हजारों प्रकार के विचार उठते रहते हैं इसलिए उनका नाम है सहस्रदल कंवल। अब त्रिकुटी योग की भाषा में क्या है? ध्याता, ध्यान और ध्येयया; प्रेमी, प्रेम और प्रेमास्पद जिससे प्रेम किया जाये, इन तीनों के मेल का नाम है त्रिकुटी। जब ध्यान गहरा हो जाता है तो तीन चीजें रह जाती हैं। मूर्त्ति बन जाती है, यही त्रिकुटी है। जब ध्यान अधिक गहरा हो जाता है तो प्रेम गुम हो गया, गुप्त हो गया। वहाँ द्वैत रह जाता है-ध्याता और ध्येय। यह सुगम है कठिन नहीं है।

जब ध्यान अधिक गहरा हो गया, उसमें लय हो गये, अपना आपा भी भूल गये तो यह अद्वैत है। यह मार्ग सरल है। चूंकि कठिनाई पसंदी आ गई है सुगम बात को कठिन बनाते हैं इस लिए आदमी भटकता रहता है। गुरु इन सब को हल कर देता है। सरल उपाय बता देता है। इसके एक, दो उदाहरण देता हूँ।

एक आदमी मेरे पास आया। उसे किसी चीज की आवश्यकता थी। उसके लिए मेरी समझ में यह आया कि इसे तप कराया जाये। फिर कैसे कराऊँ? याद रखो बिना तप किये किसी को कुछ नहीं मिलता। किसी इच्छा को लेकर उसमें बार-बार लगना और लगे रहने का नाम तप है। उस आदमी से कहा कि प्रात:काल ठीक ५बजे मेरे मकान पर मत्था टेक जाया करो। २१ दिन करो, काम हो जायेगा। देखना नागा न हो। वह बराबर ५ बजे आता और मत्था टेक कर चला जाता। उसका काम हो गया। मैंने उसकी इच्छा शक्ति को दृढ़ करने को हिम्मत से काम लिया।

दूसरी बात सुनो। एक स्त्री मेरे पास आई, कहने लगी सन्तान नहीं है। मैंने कहा अपने पति को साथ लाओ। वह सत्संगी भी है। वे दोनों मेरे पास आये। मैंने उस स्त्री से भी कहा कि ६ माह तक नमक छोड़ दे। यदि ६ महीने नहीं तो ३ महीने अवश्य छोड़ो। लड़का हो जायेगा। अगर नहीं छोड़ सकती तो चले जाओ। सोचा कि यदि यह स्त्री तप कर जायेगी तो उसके प्रभाव से लड़का हो जायेगा। ऐसा क्यों कहा? क्योंकि स्त्रियों को जुबान का चस्का होता है। जो उसे मिला उसके तप का फल मिला।

मैं आप लोगों को खजाना देकर जाना चाहता हूँ ताकि आत्मज्ञान के लिए किसी और की खोज न करना पड़े। मैं क्यों कह रहा हूँ क्योंकि मेरी ड्यूटी है। मेरे बस की बात नहीं है।

ररंकार की ध्वनि

मैंने पहिले कहा कि ररंकार का शब्द क्यों होता है। सुनो, जब तुम्हारी वृति अपने प्रीतम की लगन के प्रभाव से खिंची और उसने मूर्त्ति बनाई तो तुम्हारे मन का अनेक वाद छूटा। जब और अधिक खिंची और

ध्याता ध्येय भी छूट गये तब एकता आ गई। मन की तरंगें खिंचकर एक जगह चली गई। जो मन के ख्यालात थे वह छूट गये। मन के तार खिंच गये। उस समय जो धुनि पैदा होती है उसका नाम है ररंकार। इस सारंगी को सुनने को कहाँ फिरते हो! जब वृति खिंच जायेगी यह शब्द होने लगेगा। उस रूप के साथ लगाने की अन्दर में कोशिश करो। जिसे बाहर के प्रेम की आदत नहीं वह अन्तर का प्रेम भी नहीं सकता। यह न समझना कि बाहर की गुरुभक्ति का खंडन कर रहा हूँ। गुरु दरबार में जाते हो। तुम्हारा ध्यान रूप की ओर नहीं जमता। तरह-तरह के ख्याल उठाते रहते हो। फिर कैसे आशा करते हो कि अन्तर में सारंगी बजेगी, जब तक कि बाहर की वृतियों को खेंचा नहीं जायेगा।

इसलिए संत मत में पहिली श्रेणी के सत्संगियों को यह नियम है कि बाहर में गुरु के साथ प्रेम करो। उसकी शक्ल देखते रहो। इससे तुम्हारा मन बहकेगा नहीं। न इधर जायेगा, न उधर। लगन एक जगह लगी रहेगी। तुम्हारी सुन्न पहिले बाहर लगेगी। जब बाहर लगेगी तब अन्तर में सुगमता से लग जायेगी। यह मन्दिर तथा मूर्त्तियाँ जो बनाये गये थे, किसी उद्देश्य से बनाये गये थे। वह यही मंतव्य था कि यदि जीवों का मन अन्तरमुखी न हो तो बाहर में तो लगे। यद्यपि मेरा मन्दिर अन्दर बना है मगर मैं जब मन्दिर में जाता हूँ तो मत्था टेकता हूँ। दाता का रूप मानकर उससे प्रेम करता हूँ। कोई यह न समझे कि मैं मन्दिर, मसजिद या गुरुद्वारे का विरोधी हूँ। मन की शिक्षा का यह श्री गणेश है। यदि बच्चे को पहाड़े न पढ़ाओगे तो अर्थमैटिक कैसे निकाल लेगा। अतः प्रारम्भ में गुरु से बाहर में प्रेम करना चाहिए। गुरु भक्ति या गुरु का प्रेम आवश्यक है मगर गुरु से प्रेम नहीं कर सकते। वह कठिन है। पत्थर की मूर्त्ति से सब प्रेम करने लगते हैं। आदमियों से प्रेम कठिन है। गुरु के प्रेम

से रोटी, कपड़ा, पैसा, परमार्थ दोनों मिल जाते हैं। मोती की कदर तो जौहरी जानता है। जहाँ जौहरी नहीं उसको मोती पत्थर का एक टुकड़ा मात्र है।

क्षर, अक्षर, निःअक्षर

पारब्रह्म महासुन्न मंझारा, सोई निःअक्षर रहाया है।

क्षर, अक्षर, निःअक्षर क्या हैं? वह जो मैंने समझा है वह कहता हूँ।

क्षर-स्थूल

अक्षर-सूक्ष्म

निःअक्षर-कारण

हमारा मन जब अकेला होता है तब उसमें संकल्प नहीं उठते। वह निःअक्षर है। जब संकल्प उठें तब अक्षर और जब संकल्प का रूप बन जाता है वह क्षर है। स्वामी जी ने कहा है-

क्षर अक्षर निःअक्षर पारा। विनती करे वहाँ दास तुम्हारा॥

मैंने इनको समझा है। स्वामी जी का क्या भाव था मुझे नहीं मालुम। देखो! प्रेम में तुम्हारे विचार समाप्त हो गये। रूप सामने आ गया। अपने को भूल गये। खुद फरामोशी (अपने को भूल जाना) ही महासुन्न का स्थान है मगर मन वहाँ है। इसलिए निःअक्षर है। यह प्रेम का मार्ग है। इसके साधन से थोड़े समय में अनुभव हो जायेगा। दाता दयाल (महर्षि शिव) एक पुस्तक में लिखते हैं कि यह ६ माह का कोर्स है। मैं यहाँ तक कहता हूँ कि यह ६ दिन या ६ घड़ी का कोर्स है। मगर यह केवल उनको है जो चेतवान होकर सत्संग कर जायें। बात उनकी ही समझ में आयेगी। हुजूर महाराज (राय सालिगराम साहब) का कथन है कि २०० वर्ष की पूजा से ढाई घड़ी का सत्संग बेहतर है। एक व्यक्ति

२००वर्ष की पूजा करके उसी परिणाम पर आया, उसने उसे दूसरे को बता दिया। दूसरे को भी २०० वर्ष की पूजा करके उसी परिणाम पर आना है, इसलिए जिन महापुरुषों ने जो अनुभव करके देख लिया है उसे सुनो और उसे मानो।

हम विषयों के सौदाई बने हैं। विषयों के भोग से तृप्ति नहीं होती। सन्तान भी है फिर भी स्त्री का संग नहीं छोड़ते। हिर्स नहीं गई।५०-५५ वर्ष के हो गये मगर हिर्स नहीं जाती। मेरे जैसा ७६ वर्ष का होने के बाद भी अन्तर के अभ्यास के आनन्द की हवस नहीं छोड़ता। अपनी कमजोरी देखता हूँ तो महसूस करता हूँ।

मैंने त्रिकुटी में अभ्यास किया, आनन्द लिया। जब आदमी बूढ़ा हो जाता है तो उसकी इन्द्रियों की शक्ति कमजोर हो जाती है। यदि कामभोग की हिर्स है तो वह पूरी नहीं कर सकता मगर समय आता है जब हिर्स समाप्त हो जाती है, जैसे कि मैं अब कोशिश करता हूँ कि सहस्र दल कंवल, त्रिकुटी, सुन्न, महासुन्न की अवस्था बने मगर अब नहीं बनती। (देवीचरण को सम्बोधित करते हुये कहा-'सुन क्या कह रहा हूँ।)

मेरी नजर में मोती आया है॥

....

भंवर गुफा में सोहं राजै, मुरली अधिक बजाया है॥

मैं तिल के तिल भीतर चला था। उसका अभ्यास किया। पक्के होते-होते त्रिकुटी में आया। मेरा मन पहिले अनेकवाद था। फिर वही त्रिकुटी थी। मेरा मन ही द्वैत था। मेरा मन ही अद्वैत था। सब खत्म हो गये। अब रहा शब्द और प्रकाश। जो वस्तु शब्द और प्रकाश में रहती है और शब्द और प्रकाश देख रहे हैं। वह देखने वाली और वस्तु है।

अन्तर में शब्द हो रहा है सुनने वाला कोई और है। वह जो अन्य चीज है वह तुम हो, तुम्हारी जात है, तुम्हारा निज स्वरूप है। जब इसका ज्ञान हो गया, फिर क्या है? मेरा जी चाहे प्रकाश देखूँ, जी न चाहे न देखूँ। जो चाहे संकल्प करूँ, जी न चाहे न करूँ। यह मेरी अपनी दुनिया है आपकी नहीं। हम और आप हैं क्या! जात (निज स्वरूप) हैं कि नहीं? जब यह ज्ञान हो जाता है तो जितने झगड़े सुख दुखों के हैं सब खत्म हो जाते हैं।

गुरु के पैदा करने वाला मैं हूँ। यह मैं गुस्ताखी से नहीं कह रहा। जब यह ज्ञान हो जाता है, फिर बन्धन टूट जाते हैं। अभ्यास का बन्धन टूट जाता है। गुरु की, पंथ की गुलामी छूट जाती है। फिर क्या हो जाता है? जीव निर्द्वन्द हो जाता है, चुप हो जाता है। यही जीवन मुक्त दशा है। यह ज्ञान की दृष्टि से है। अमली दृष्टि से मैं समझता हूँ कि मैं चेतन का एक बुलबुला हूँ। वह एक तत्व है। आधार है। उसे अनामी पद कहो या अकाल पद कहो। क्या है, क्या नहीं कुछ पता नहीं। जब उस अवस्था से उत्थान होता है तब समझता हूँ कि मैं चेतन का बुलबुला हूँ। इसी से पैदा हुआ और इसी में समा जाऊँगा। मगर कोई मानेगा नहीं, क्योंकि पहिले मैंने स्वयं नहीं माना था। फिर इस अवस्था में तुम कैसे मानोगे वर्ना असलियत यही है।

सुमिरन भजन ध्यान को त्यागो।
राम खुदा का वहम तियागो।
जैसी गुजरे खुशी से काटो।
जो समझा फकीर कह गायो।

यह जीवन मुक्त पुरुष का वर्णन है। यह सबके लिए नहीं है। हमने बड़े परिश्रम के बाद इस अवस्था को प्राप्त किया है।

बीत राग पुरुष का ध्यान

अब तो मैं यह समझता हूँ कि इसके लिए इलाज यह है कि किसी बीतराग पुरुष को खोपड़ी में रखो। जैसे की संगत की जाती है वैसा ही प्रभाव होता रहता है। रेडीयेशन का नियम काम करता है। बीतराग पुरुष वह है जो हर प्रकार के बन्धनों से रहित हो। जिसमें न स्वामीपने का ख्याल हो न सेवकपने का ख्याल हो। न राम का ख्याल, न भक्ति का। किसी वस्तु में कोई आसक्ति नहीं रखता। जो ऐसे पुरुष का ध्यान करता है उसका यह जन्म भी सफल हो जाता है और अगला जन्म भी सफल हो जायेगा। यदि किसी और गुरु से नाम लिया हुआ है और वह बीतराग नहीं भी है मगर यदि तुमने उसे बीतराग माना है तो तुम्हारे ख्याल की शक्ति से तुमको यह गति मिल जायेगी जो शायद तुम्हारे गुरु को न मिली हो। मैं यह शब्द तुम्हारे भले को कह रहा हूँ कि अपने- अपने गुरुओं को बीतराग मानो। जिस रूप में मानते हो उस रूप में मानो। एक स्त्री है। यदि तुमने उसे अपनी पत्नी माना है तो उसके ध्यान से काम पैदा होगा। यदि उसे माता माना है तो काम भोग का ख्याल भी पैदा नहीं होगा।

साधन की हर अवस्था का अमल करना कठिन है। इसलिये यह सहज नुस्खा है कि अपने गुरु को बीतराग पुरुष मानो। जैसी आसा वैसी वासा। यदि उसे विश्वास से पूर्ण माना है तो तुमको लोक-परलोक दोनों मिल जायेंगे। मुझे तो मिला औरों का पता नहीं। यदि फकीरचन्द की देह को गुरु समझते रहोगे तो तुम्हारा बेड़ा पार नहीं होगा।

तृतीय प्रवचन (२८-१-६४)

पिछले दो सत्संगों में मैंने अपने कर्म भोग, वश या मौज आधीन जीवन में जो समझा वह कबीर की वाणी के आधार पर बता दिया। मेरी समझ में वही आया जो इस शब्द से प्रगट है:-

मैना मैना रे मैना॥

मैना तन पिंजरे में रहकर, बोली बोले रे मैना॥
जब तक 'मैं' है तब तक 'तू' है, मोर तोर का झगड़ा।
मैं जब गया-गया तब 'तू' भी अब किसका है रगड़ा॥

सत गुरु दीनो रे सैना॥

जो 'तू' कहता वह अन्धा है, 'मैं' कहता दीवाना।
'मैं मैं' 'तू तू' को जो छोड़े, वही है चतुर सयाना॥

यह है सच्ची बैना॥

जब मैं तब गुरु नहीं है, जब गुरु हैं मैं नाहीं।
प्रेम गली अति तंग है भाई, दोनों कैसे समाई॥

दोनों रहते हैं ना॥

तोर मोर काया की रसरी, प्राणी फांस फंसाने।
तोड़ के रसरी हो गये न्यारे, फिर नहीं वह भरमाने॥

हो गये सच्चे मैना॥

बकरी मैं कह गला कटावे, मैं मैं कह मिमियावे।
मैना मैना वचन सुनावे, बेसन शक्कर खावे॥

कैसी मीठी मैना॥

मैना मैना मैना बोले, बोल के रटन लगावे।
मैं को त्याग शान्त बन जावे, सुख आनन्द धन पावे॥

पावै नित ही चैना॥

'मैं' 'तू' भरम विकार है मन का, मन माया का साथी।
जो 'मैं' कहेगा दुख से मरेगा, गह के अहं का हाथी॥

मैं तू दोनों हैं ना॥

सुरत की पंछी मैना बन कर, मैना मैना कहती।
सुन्न वृक्ष की छाल पर बैठी,दुख सुख अब नहीं सहती॥

दिन है जहाँ न रैना॥

मैना मैना तूना तूना, यह सतगुरु की वाणी।
बाणी सुन सुन जो चितलावे, बने सहज निरबानी॥

माया फिर कभी व्यापे ना॥

राधास्वामी शब्द सुरत की, धुन गा गा के सुनावे।
जो गावे नित गावे सुनावे, फिर पिंजरे नहि आवे॥

वह बन जावे मैना॥

इस मैं-मैं, तू-तू के झगड़े को मिटाने के लिए मैं वही बता सकता हूँ जो मैंने अनुभव किया है। जब मनुष्य अमली पहलू में अर्थात् जीवन व्यवहार में आता है तो सब खो जाता है। अमली जीवन में 'मैं' को मिटाना खाला का घर नहीं है। जब तक जीवन तजुर्बे से नहीं गुजरता, ठोकरें नहीं खाता अर्थात् दुनिया में भी और अभ्यास में भी, तब तक मैं पना दूर नहीं होता। मुझे इसकी समझ बिना ठोकर खाये नहीं आई। सम्भव है कोई हो जिसने ठोकर न खाई हो और उसकी 'मैं' चली गई हो।

हमको मैं तू बनाने वाली है हमारी बुद्धि। दुनिया में होश आया। दुनिया के व्यवहार को देखा। धार्मिक ग्रन्थों की बात सुनी। कठिनाईयाँ और निर्धनता भोगी। इन बातों ने मजबूर किया कि यह माना जाये कि दुनिया का बनाने वाला कोई है। दुनिया को देखता हूँ, सुनता हूँ। फिर यह कहूँ कि संसार नहीं है यह बातें ही बातें हैं। जब तक बुद्धि, कर्म और ज्ञान इन्द्रियाँ हमारे साथ हैं, आँखे देखती हैं, कान सुनते हैं, फिर कैसे कहूँ कि दुनिया नहीं है। यदि कहूँ तो दीवाना हूँ। अन्तर में अभ्यास किया जाता है। राम, कृष्ण, गुरु आदि प्रगट होते हैं। शब्द और प्रकाश होता है। फिर यह कहा जाये कि यह कुछ नहीं तो गलत है। चूंकि कबीर का अनुभव मेरे अनुभव से मिलता है इसलिये मैं उसे ठीक मानता हूँ। कोई कुछ बात कहता है तो या तो पूर्व स्थिति (Back ground) का तर्जुबा होता है या निजी स्वार्थ होता है तब कुछ कहता है। आपने ध्यान नहीं दिया मैंने दिया है। पहिली शादी हुई। स्त्री ७ वर्ष बीमार रह कर चल बसी। गरीबी थी। नौकरी की, ईटें ढोया करता था। उंगलियों से खून निकला करता। ऐसी-ऐसी कठिनाइयाँ भोगी। अनुभव ने सिद्ध किया कि दुनिया है तो सही मगर इसमें सुख नहीं। फिर यह लालसा हुई कि अंतर में चलो, राम मिलेंगे। ऐसी बातें भी सुनी जहाँ दुनिया के पीछे लगे। जब अन्तर में चले तो दर्शन हुये। वहाँ से उत्थान हुआ तो बड़ा आनन्द प्रतीत हुआ मगर वह अवस्था स्थायी न रही। एक दिन मन लग गया आनन्द प्रतीत हुआ। यदि दर्शन नहीं हुये तो बे-आनन्दी आ गई। फिर क्या ख्याल हुआ। यह कि अंतर का राम मेरे काबू नहीं आता तो जिन्दा राम मिल जाये तो उससे प्रेम करूँ। रोता रहता था। मेरा स्वप्न दाता दयाल (महर्षि शिवव्रतलाल जी महाराज) के चरणों में ले गया। उनसे प्रेम किया। उनको ही सब समझा, आरतियाँ की। ताज

पहिनाये आदि-आदि। उन्होंने कहा यदि स्थायी सुख चाहता है तो उस स्थान को चल जो इस शब्द में वर्णन किया गया है

मेरी नजर में मोती आया है॥

....

कोई कहे हलका कोई कहे भारी....

....

मैं इस पर चला। जिन-जिन चक्रों या स्थानों का वर्णन है उनके लिये १२-१२ घन्टे अभ्यास किया। मेरा कर्म भोग था या मेरा वासना को काटने को दाता दयाल (महर्षि शिव) ने सत्संग कराने का काम दिया। वह मैंने इस मार्ग के चलने वालों को वर्णन कर दिया मगर कोई ज़िज्ञासु मेरी तरह चलने के भ्रम में न आये। बिना गुरु की देख-रेख और हिदायत के चलने में भय है।

यदिम ैंअ ाचार्यन ब नतात ोम ेराभ ्मद ूरन ह ोता ाज ीवनके अनुभवों ने सिद्ध किया है कि जितने रूप-रंग अन्तर में प्रगट होते हैं वे बाह्य प्रभाव होते हैं जो हमारे मस्तक पर पड़े होते हैं। एक रात मैंने बड़ा भारी प्रकाश देखा। उसमें देखा कि स्वामी जी और दाता (महर्षि शिव) बैठे हैं। उन्होंने मुझे आवाज दी। मैं बाहर चला आया। वहाँ भी वही दृश्य दिखाई दिया। जब आचार्य पद पर आया और लोगों के कहने पर मालुम हुआ कि उन्होंने मुझे अन्तर में देखा, किसी को दवा बताई, किसी को मरने पर ले गया, तब मुझे विश्वास हो गया कि यह सब मनुष्य के मन का ही खेल है। जब तक मनुष्य उन दृश्यों को गैर समझे बैठा है उसकी तू खत्म नहीं होगी, जब तक वह यह न समझ ले कि वह मैं ही हूँ। यह कहना कि मैं ही ब्रह्म हूँ तो यह वेदान्त में आ जाता है। यदि

तू है तो किसी समय ऐसे दृश्य आते हैं जिन्हें वह नहीं चाहता मगर फिर भी आते हैं। स्वप्न देखता है, स्त्री आती है ब्रह्मचर्य भी नष्ट कर देता है। फिर भी वह आते हैं?

इसीलिये मेरी समझ में यह आया है कि इंसान के दिमाग पर जैसे-जैसे विचार या संस्कार पड़े हैं वह फुरते हैं और तरह-तरह के रूप धारण करके दिखाई देते है। यदि सत्संग में मनुष्य को ज्ञान हो जाये तो वह दृश्य जो साधन में या दुनियावी व्यवहार में आते हैं वह न आवें। इस ज्ञान से वह काल और माया के देश में दुख-सुख से बच सकता है। उसे शान्ति मिल सकती है। यह मेरा अनुभव है जो छोड़े जा रहा हूँ।

शास्त्रकार साधु सन्त की महिमा गाते हैं। लोग मुझे महात्मा समझते हैं मगर आपको मेरे जीवन के बारे में क्या इल्म हो सकता है कि 'मैं चोर हूँ या डाकू हूँ। मेरे नाम के पहिले संत या परमसंत का शब्द है इसी से मेरे पीछे दौड़े आते हैं या दाता दयाल (महर्षि शिव) ने मेरे लिये लिखा था-

तीन ताप से जीव दुखी है, निबल अबल अज्ञानी।
तेरा काम दया का भाई, नाम दान दे दानी॥

नाम क्या है? राधास्वामी पंथ में वह नाम राधास्वामी है। कोई काम का नाम देते है कोई कृष्ण का, कोई कुछ कोई कुछ मगर नाम वह है जो अध्यात्मिक गुरु बतावे। अध्यात्मिक गुरु बताते हैं कि तू कौन है। मैंने अपने नाम की समझ प्राप्त करने में उम्र गुजारी है।

मेरे चार रूप है-(१) देह- पं० मस्तराम के वीर्य से बना, उनसे यह पैदा हुआ और इसका फकीरचन्द नाम रखा गया। (२) मन- सूर्य चन्द्रमा तारागण आदि की किरणें पृथ्वी पर पड़ी। उनके मिलाप से

भोजन की सामिग्री पैदा हुई। वह मैंने खाई। अब मैं सोच-विचार करने को विवश हुआ. मेरे मन के पैदा करने वाले ग्रह व नक्षत्र हैं। यह सिद्ध हो गया कि मन वहाँ से बना। (३) शब्द प्रकाश- साधन द्वारा शब्द और प्रकाश में जाना सीखा है। अब मन को छोड़कर शब्द और प्रकाश में जाता हूँ।

(४) मेरा असली रूप-मेरा असली रूप कहाँ से आया? सुनो, ऊपर जो ग्रह हैं जिन्हें हिन्दूशास्त्र सोहं कहते हैं, सत पद कहते हैं, उनसे आया। विज्ञान वेत्ता (Scientists) कहते हैं कि इस सूर्य से आगे एक और सूर्य कई करोड़ गुना बड़ा है। दुनिया है। उसका अंश हमारे अन्तर आत्म स्वरूप है। उसे जानने को मुझे साधन अभ्यास करने पड़े। अब जो अनुभव किया है यह बताता रहता हूँ और इन सत्संगों में बताया है। कबीर ने कहा है

है तिलके तिल भीतर, बिरले साधू पाया है।

यह मेरे अनुभव में आया है कि मैं चेतन्य का एक बुलबुला हूँ। संतों ने उसे सुरत कहा है। इससे मुझे क्या मिला? मैं यह जान गया, समझ गया, मेरे अनुभव में आ गया कि यह दुनिया काल और माया का खेल है। अब मैं इस खेल में फँसता नहीं।

दाता दयाल (महर्षि शिव) ने फकीर की महिमा गाई है।

उनका शब्द है :-

तू फकीर है मेरे प्यारे, सुन फकीर की वानी।
साधू कहें फकीर को भाई, साधू जग सुखदानी॥

पर उपकारी जन हितकारी, गुरु के आज्ञाकारी।
अवगुन त्यागी गुन के ग्राही, दया भाव चितधारी॥

निज चित सोधें, मन परबोधें, जीव दोष नहि दृष्टि।
अपने भाव में बरतें निसदिन, करें दया की दृष्टि॥

मोह माया और छल चतुराई, छोड़ें मूल विकारा।
पर हित लागी सहज विरागी, ज्ञान बुद्धि भण्डारा॥

दुःख कलेश सह अपने ऊपर, जीव का करें सुधारा।
भव दुख भंजन काम निकन्दन, जम से दें छुटकारा॥

धर कपास की गती विमल चित,निरस विशुद्ध कहावें।
सहें विपति कठिनाई जग की, और का दोष छिपावें॥

सरल सुभाव रहें जग माहीं, अपना रूप संभारें।
औरन के अवगुन नहिं देखें, दया का मरम विचारें॥

सुख देवें दुख हरें निरन्तर, क्षमा करें अपराधा।
हंसी खुशी आनन्द परम गति, अगम अलेख अबाधा॥

नाम फकीर धराया तूने, हो फकीर अब साँचा।
जैसा नाम तो गुण भी वैसा, मन कर्म सहित सुबाचा॥

है फकीर का नाम पियारा, मैं फकीर का दासा।
तन मन धन फकीर पर वारूं, बसूं सुसङ्ग सुबासा॥

कठिन नाम है कठिन काम है, कठिन फकीर कमाई।
जग के भव दुख नासें पल में, जब फकीर जग आई॥

जो फकीर मोहि दर्शन देवे, अपना भाग सराहूं।
अपने तन की चाम की जूती, पग फकीर पहनाऊँ॥

मैं नहिं राम कृष्ण का सेवक, ईश ब्रह्म नहिं जानूँ।
मैं फकीर का नाम दिवाना, सबसे बढ़कर मानूँ॥

मेरे साध हैं शब्द विवेकी, सन्त वंश कुल शोभा।
चरन कंवल मस्तक पर धारूँ, प्रेम मगन मन शोभा॥

एक घड़ी साधू की संगत, कटे मोह जम फाँसी।
मेरी नजर में साधु फकीरा, सत चित आनन्द रासी॥

जो फकीर का दर्शन पाऊँ, चरन सरोज पखारूँ।
आप बसूँ उसकी शरनाई, औरों को संग तारूँ॥

साधु की संगत गुरु की सेवा, सहजहि काम बनावे।
जिस पर साध की दृष्टि पड़ गई, फिर जग योनि न आवे॥

तरवर सरवर मेघ का पानी, औरन को सुखकारी।
तैसे ही सुन मेरे फकीरा, साधू पर उपकारी॥

तू फकीर बन, तू फकीर बन, तू फकीर बन भाई।
मैं भी तरूँ फकीर चरन लग, ऐ फकीर! सुखदाई॥

सुन ले कथा सुनाऊँ तुझको, प्रगटे विमल विवेका।
जीव अनेक रहें जग अन्दर, पर फकीर कोई ऐका॥

फकीर सुख के दाता कहे गये हैं। वे जगत को कैसे सुख दे सकते हैं इसका मुझे कोई हल नहीं मिला। या तो वाणी रोचक है या फकीर अपने जगत को सुखी कर सकता है। यदि सचमुच फकीर सुख का दाता है तो चाहता हूँ कि भारत का कल्याण हो। जो मेरे पास आये वह सुखी हो जाये। यह सौ फीसदी सही नहीं होता। मैंने यथाशक्ति कोशिश की है कि सच्चा फकीर बनूँ। जगत का भला चाहता रहता हूँ। यही उपकार कर सकता हूँ। जो समझा है वही बताता रहता हूँ। इसके सिवाय और कुछ नहीं। मेरे पास से बीमार प्रशाद ले जाते हैं वह राजी हो जाते हैं।

कोई जगह नहीं जहाँ सन्त या फकीर नहीं। इतने सन्त या फकीर होते हुये दुनिया में शान्ति क्यों नहीं? बार-बार दिल में भाव उठता है। तुझे जग कल्याण का काम दिया। तू ने क्या किया! आज मैं पढ़ रहा था राम व वशिष्ठ का सम्वाद जो महारामायण में आया है :-

'ऐ राम! प्रकृति में मनुष्य की सबसे अधिक महिमा और प्रतिष्ठा है और देवी-देवता सब इसकी आधीनता में आ जाते हैं।

अपने आपे को समझ आपे में सारा भेद है।
भेद जब अपना नहीं जाना तो भ्रम और खेद है॥

नर में नारायण है नारायण में नर है जान ले।
भेद इनमें कुछ नहीं जा गुरु से गुरु का ज्ञान ले॥

राम प्रसन्न हुये-'आप ,सचमुच गुरु और उस वशिष्ठ ऋषि के अवतार हैं जो आकाश में मंडलीक हो रहा है।'

वशिष्ठ हंसे-'ऐ राम! तुम सम्पूर्ण ब्रह्म के अवतार हो।'

राम-'मैं इसे नहीं जानता और न जानना चाहता हूँ।'...

'क्या यह सम्भव है कि मनुष्य ब्रह्म के जगत को अपने अधीन कर सके?'

वशिष्ठ-'सृष्टि में तुम्हारा अवतार इसी मन्तव्य से हुआ है। तुम सब कुछ कर सकते हो और कर सकोगे। सूर्य, चन्द्रमा, तारे और देवताओं को आज्ञा दो कि वह शान्त हो जायें और वह शाँत हो जायेंगे।'

मैं रिसर्चर हूँ। मेरे जिम्मे ड्यूटी है। मैं सच्चे हृदय से चाहता हूँ कि प्राणी मात्र को शान्ति मिले। जो दुखी मेरे पास आवे वह सुखी हो जाये। भारत की दशा बदल जाये। यह ठीक है कि जो मेरे (touch) संसर्ग में

आये उनके बहुत से कष्ट दूर हुए। मगर किनके? उनके, जिन्होंने मुझ पर विश्वास किया। कई आदमी ऐसे हैं जिनका काम नहीं बनता। अत: जिसको जो मिलता है उसके अपने कर्म और इच्छाशक्ति से मिलता है। लोग मुझे गलत रूप से मान देते हैं।

दूसरे यह कि प्राणी सत्संग के दीवाने न बनें। हमारी अन्तिम मंजिल क्या है? शब्द व प्रकाश। यही संतमार्ग है। हजरत मुहम्मद साहब का वाक्य है कि मैं अल्लाह के नूर से बना हूँ। यहाँ हर एक उसके नूर से बना है। यदि इन बड़े-बड़े धार्मिक जगत के लोगों और विद्वानों को इसका अनुभव ज्ञान हो जाये तो जितने धार्मिक झगड़े हैं वह दूर हो जायें और हम शाँति से रह सकते हैं। यह मेरे अनुभव का निष्कर्ष है। इसलिए आवाज उठाई है कि मनुष्य बनो।

इन्दौर की घटना है कि जब एक स्त्री के मरने का समय आया तो उसे बाबा फकीर (यानी मैं) दिखाई दिया और कहा कि अगले शनिवार को तुझे ले जाऊँगा। जब दूसरा शनिवार आया तो उसने कहा कि बाबा फकीर पालकी लेकर आ गया है। मैं जा रही हूँ। राम-राम न कह कर राधास्वामी-राधास्वामी कहो और प्राण त्याग दिये। वहाँ से ६-७ आदमी आये और सब हाल सुनाया। मैंने कहा कि न मुझे इसका कुछ पता है, न मैं वहाँ उस माई को लेने गया। इससे जिस निष्कर्ष पर आया हूँ, वह सारतत्व या मोती धार्मिक जगत को पेश कर रहा हूँ। हिन्दू का राम उसका अपना श्रद्धा विश्वास और मन है। इसी प्रकार जैनियों का तीर्थकर, सिक्खों का गुरु अथवा मुसलमानों का हजरत मुहम्मद, उनका श्रद्धा विश्वास और मन है और भी इसी प्रकार समझ लो। अज्ञान के कारण हिन्दू, मुसलमान, सिक्ख, राधास्वामी पंथ वाले तथा अन्य

सम्प्रदाय आपस में बँट गये। आज मानव जाति गुमराह (भूल भ्रम) की खंदक में पड़कर अक्ल खो बैठी है।

मैं यह इसलिए कह रहा हूँ कि मुझ पर जगत कल्याण की ड्यूटी है। बराबर परीक्षण कर रहा हूँ। जो परिणाम निकले वह बताता जा रहा हूँ। Spiritual line की Laboratory(अध्यात्म मार्ग की प्रयोगशाला) में जो परीक्षण किये हैं, उन्हें यहाँ तक सच्चा पाया है। मेरा स्वभाव हो गया है कि जो दुखी मेरे पास आता है मेरा दिल मान जाता है कि यह दुखी है या मक्कार है। मक्कार लोग ऊपरी आँसू भर लेते है। सत्संग उनको लाभदायक है जिनको लगन है। माँग और पूर्त्ति का सवाल है। पब्लिक को शान्ति की आवश्यकता है (Demand)नहीं है। जहाँ तक मेरा अनुभव है इच्छा शक्ति (Will power) वहाँ काम करती है, जहाँ आवश्यकता या किसी वस्तु की माँग (Demand) होती है।

मेरा कहना है कि इन्सानियत का राज हो जाये। सूर्य की किरण को आने में समय लगता है। ख्याल को भी आने-जाने में समय चाहिये। यदि दो डेढ़ साल तक मानवता का प्रचार नहीं होता। यदि जिन्दा रहा, तो कह जाऊँगा कि मजहबों का कथन प्रोपोगंडा मात्र है रोचक है। यदि ऐसा हो जाये तो फिर ठीक है।

मान लिया कि मजहबी दुनिया के आदमी मुक्ति दाता हैं। जो मेरे कथन को पढ़ेंगे वह कह सकते हैं कि मैं उस दर्जे तक नहीं पहुँचा। पंथों में और सम्प्रदायों के आचार्यों के यहाँ करोड़ों रूपया धर्म खाते में जाता है। उसका क्या उपयोग होता है पता नहीं। क्या संतों या धार्मिक जगत के आचार्यों की यह ड्यूटी है कि उस रूपये से अनुचित लाभ उठायें?

जो मेरी ड्यूटी थी कर दी। तो फिर मोती क्या है? ऐ मानव! तेरा अपना रूप प्रकाश व शब्द है। अपने रूप को जान। काल माया के चक्र से निकल। यह ख्याल की दुनिया है। मनोमय जगत है। अपने ख्याल को बेहतर बना। शुभ संकल्पमस्तु। आवागवन से बचने को सत्संग और साधन कर। बाकी रहा सवाल कि कोई आदमी अपने ख्याल या संकल्प से किसी दूसरे का या जगत का भला कर सकता है या नहीं? यह मैं करता हूँ। भारत हमलों से बचे, परस्पर प्रेम हो, सबको शान्ति मिले। यदि यह नहीं होता तो मैं उसे दर्ज़े तक नहीं पहुँचा यद्यपि मैंने अपनी ओर से सच्चा बनने और साधन करने में कोई कसर नहीं छोड़ी। यदि मौजूदा धार्मिक जगत के पथ-प्रदर्शन समझते हैं कि पुस्तकों में जो लिखा है वह ठीक है तो भारत में शान्ति ले आयें। संतों ने इंसान बनकर शान्ति दी। जब कोई काम उन्होंने किया इंसान बनकर किया।

आप लोग मेरी विचार धारा से सहमत हों तो मेरी आवाज को बड़ों-बड़ों तक पहुँचा देना। मानवता मंदिर, होशियारपुर में इसीलिए बनाया है कि मेरी आवाज पढ़े लिखों तक तथा उन तक जो देश का भला चाहते हैं पहुँच जाये।

प्रवचन

(हैदराबाद २९-१-६४)

ईश्वर, परमेश्वर, ब्रह्म, पर ब्रह्म ये सब शक्तियाँ है जिनके मिलने से हमारे जीवन के अहसासात (भान बोध) बदलते रहते हैं। मैं बचपन में राम कृष्ण का भक्त था। तत्पश्चात् गुरु भक्ति की। दाता दयाल (महर्षि शिव) ने गुरु महिमा का स्पष्ट वर्णन करते हुये शब्द लिखा है और गुरु भक्ति को अमूल्य रत्न बताया है। वह शब्द सुनो:-

गुरु मध्य आदि अनन्त अद्‌भुत, अमल अगम अगोचरम ,
विभ्र विरजपार अपार निर्गुन, सगुन सत्य विश्वेश्वरम्॥

जेहि मति लखे नहिं गति लखे, सो शुद्ध तत्व विचार है।
जो चरन कंवल की ओट आया, भव से बेड़ा पार है॥

गुरु विष्णु मूरत शिव की सूरत, गुरु को ब्रह्मा जान तू।
गुरु ब्रह्म हैं, परब्रह्म हैं, यह सोच समझ के मान तू॥

कर गुरु की संगत रात दिन, नर जन्म अपना सुधार ले।
दे फेंक माया बोझ सिर से, जम का सीस न भार ले॥

सीस दे तन मन को दे, गुरु भक्ति रतन अमोल ले।
राधास्वामी भेद बतायें तुझको, हिये तराजू तोल ले॥

इस शब्द में गुरु भक्ति को अमूल्य रतन बताया गया है मगर उन्होंने एक शब्द मेरे नाम बगदाद में भेजा था, जिसमें उन्होंने मुझे चेताया था कि मै भी बँधुआ न बना रहूँ। यह पूर्ण गुरु की महिमा है कि वह हर प्रकार के बन्धनों से छुड़ाकर भवपार कर देता है।

वह शब्द है :-

मन तू सोच समझ पग धार॥

बिन समझे कोई पार न पावे, भटके बारम्बार।
संशय दुबिधा और चतुराई, यह अज्ञान विकार॥

कोई नर पशु कोई त्रिया पशु, गुरु पशु कोई गंवार।
वेद पशु है सब संसारा, समझ विवेक विचार॥

माया पशु माया का बंधुआ, मुक्ति पशु स्वीकार।
भक्ति पशु बन्धन नाहि काटे, बूड़ा काली धार॥

ज्ञान पशु की क्या करूँ निन्दा, वह ग्रंथन की लार।
जड़ चेतन की गाँठ न खोले, उरझ उरझ रहा हार॥

योग पशु बंधे योग की रसरी, बैठे आसन मार।
राधास्वामी चरन शरण बलिहारी, सेवक हुआ भवपार॥

बहुत से लोग ब्रह्म परब्रह्म आदि शक्तियों की उलझन में हैं। बहुत से साधन अभ्यास के चक्र में हैं। इसीलिये मैं सूक्ष्म रूप में साधन के स्थानों की व्याख्या किये देता हूँ कि असलियत समझ में आ जाये और तुम जीवन सुख से गुजार सको।

मानव शरीर में ब्रह्माण्ड छिपा हुआ है। शास्त्र भी ऐसा ही कहते हैं। उन ब्रह्माण्ड की शक्तियों से जो वस्तु हमको चाहिये, वह कहाँ से मिलती है उनका ज्ञान नहीं, इसीलिये हम भटकते रहते हैं। संतों ने बताया है कि अपनी सुरत को वहाँ ले जाओ जहाँ उस वस्तु को देने वाली शक्ति रहती है। जो व्यक्ति स्वस्थ रहना चाहता है तो उसे उन

नियमों पर चलना पड़ता है और वह परहेज करना पड़ता है जो डाक्टर बताता है। व्यायाम करना पड़ता है। शुद्ध और स्वच्छ वायु में रहना, स्वच्छ जल पीना आदि-आदि तब लाभ होता है। इसी प्रकार मनुष्य की खोपड़ी में वह स्थान हैं जिनसे हमको अपनी आवश्यकता की वस्तुएं मिल सकती हैं। प्रथम स्थान ज्योति भौतिक या सांसारिक पदार्थ चाहता है वह जब तक विराट पुरुष के स्थान पर एकाग्र चित होकर वासना या प्रार्थना न करेगा वह पदार्थ कदापि नहीं मिल सकता।

जब कोई व्यक्ति प्रार्थना करता है तो उसकी चित्त वृति पहुँच जाती है तो वह इच्छा पूरी हो जाती है। जिनको इसका पता नहीं है उनको उनकी प्रार्थना से इतना लाभ नहीं होता। हाँ कभी वृति अनजाने विराट पुरुष के स्थान पर पहुँच जाती है तब उसका काम हो जाता है। उस विराट पुरुष के स्थान का नाम संत मार्ग में सहस्रदल कंवल है। वहाँ बैठकर किसी नाम से प्रार्थना करो। वर्णात्मक हो या कोई और। जिस वस्तु की इच्छा है वह इच्छा पक्की हो, दृढ़ हो अथवा प्रबल हो। वृति इस सहस्रदल कंवल पर एकाग्र होनी चाहिये।

लोगों को पता नहीं है कि गुरु देता क्या है। वे अभी अज्ञान में हैं। गुरु पशु बने हुये हैं। गुरु के शरीर रूपी खूँटें से बंधे हुये हैं। कोई किसी गुरु के साथ बँधा है कोई किसी के। जब गुरु तत्व का भाव मिल जाता है तो जीवन सुखी हो जाता है। जिसको गुरु मिल गया वह दुखी क्यों? अर्थात् वह दुखी नहीं रहना चाहिये। गायत्री मंत्र का साधन करने वाला दुखी नहीं रहता ऐसा शास्त्र कहते हैं। वह साधन माला लेकर वर्णात्मक मंत्र का उच्चारण नहीं है। वह साधन साधारण जीव नहीं कर सकते।

इसलिये उसका पाठ साधन सम्पन्न ब्राह्मण उनके लिये करते आये हैं। प्राचीन समय में पुरोहित अपने यजमान को गायत्री का जप किया करता था। जिस वस्तु की यजमान को जरूरत है वह वस्तु जब मिलेगी जब उस ज्योति स्वरूप या सहस्रदल कंवल के स्थान पर जप करेगा। जब तक कोई इन स्थानों से नहीं गुजरता वह लाख कोशिश करे काम न बनेगा।

(श्री नन्दूभाई जी को संकेत करते हुये कहा कि जिनको नाम देते हो उनका अधिकार देख लिया करो।)

श्री आनन्द राव को संकेत करते हुये कहा कि यदि नाम और यश प्राप्त करना हो तो सत्संग में बैठकर सच्चाई का अनुभव करा दो। उनकी समझ में बैठ जाये कि ऐसा -ऐसा करोगे तो यह हो जायेगा। मैं यह शब्द क्यों कह रहा हूँ? इसलिये कि लोगों को कुछ मिल जाये।

गुरु सेवा को आज लोगों ने गलत समझा है। वे कहते हैं कि गुरु को दान देना चाहिये। मैं भी यही कहता हूँ कि गुरु को सब कुछ दो। किसी के पास एक लाख की सम्पत्ति है। उसमें से उसने ९९९९ दान कर दिये। शेष अपने लिये रख लिये। उस दान का कोई विशेष फल नहीं। जिस दान के देने से मोक्ष मिल सकती है वह दान है सर्वस्व दे देना। अपने तन, धन को अपना न समझना। जब तक कोई आदमी सब कुछ नहीं देता, काम नहीं बनता वह केवल गुरु ही ले सकता है। वह कैसे? तुमको अधिकारी पाकर गुरु तुम को समझ या ज्ञान, देगा और तुम्हारे देह, मन, धन धाम, के बन्धन को छुड़ा देगा। उसको यों समझ लो कि तुम्हारा कल्याण उसी समय होगा जब तुम यह विश्वास कर लोगे या

निश्चय पूर्वक समझ लोगे कि यहाँ हमारा कुछ नहीं। हम सब मुसाफिर की हैसियत में सेवक हैं। संसार में रहते हुये सारा काम करो। खूब खेलो मगर समझ लो कि यहाँ तुम्हारा कुछ नहीं।

यदि आप दान इस नीयत से देते हो कि फल मिले तो कर्म का फल तो जाता नहीं, उस दान का फल लेने को जन्म लेना पड़ेगा। ८४ का चक्र खत्म नहीं होगा। इसलिये दाता दयाल (महर्षि शिव) ने ईश्वर भक्ति के बजाय गुरु भक्ति की ओर आकर्षित किया है ताकि सारतत्व या असलियत का रहस्य मिल जाये अथवा समझ आ जाये। उस समय के आने पर अमल करोगे तो ८४ का चक्र छूट जायेगा। मगर पहिली मंजिल या ज्योति स्वरूप के साधन से मुक्ति नहीं होगी, पहिली मंजिल जो है वह ज्योति स्वरूप की है जो साँसारिक पदार्थ देती है। जब तक सहायता के आधीन रहोगे आवागमन से नहीं छूट सकते। आप लोग गीत पढ़ते हैं। कृष्ण ने अर्जुन को इस विराट पुरुष का दर्शन कराया। उसे विजय प्राप्त कराई मगर अर्जुन को मोक्ष नहीं हुआ। इसका प्रमाण महाभारत है। उसमें आता है कि पाँचों पाँडव बर्फ में गल कर मरे। जब धर्मराज वहाँ गया तो युधिष्ठर से कहा कि तुम स्वर्ग में चलो। उसने कहा कि मेरे भाई कहाँ हैं? वे जहाँ हैं वहाँ ले चलो। यदि अर्जुन ज्योति स्वरूप के दर्शन करने वाला मोक्ष को प्राप्त हो जाता तो नर्क या स्वर्ग में नहीं जाता। यही बात संत कहते हैं कि ज्योति स्वरूप के दर्शन से मोक्ष नहीं मिलती। जहाँ संतों ने खंडन किया है उसका भाव यही है कि सुरत नीचे न फँसी रहे किन्तु आवागमन से निकल जाये। इसी तरह ५-६ दुकानें हैं। जिस वस्तु की आवश्यकता है उसी दुकान पर चले जाओ

और वह ले लो। यदि साँसारिक, मानसिक और आत्मिक तीनों वस्तुओं की जरूरत है तो उनकी प्राप्ति को राधास्वामी मत में पाँच नाम का सुमिरन बताया गया है। शास्त्रों में पाँच कोष वर्णन किये हैं। वही पाँच नाम का सुमिरन वहाँ, वही पाँच का यहाँ। रहस्य को न जानने से आपस में धर्मावलम्बी व्यर्थ लड़ते हैं।

संत जीवन गुजारने का रहस्य बताते हैं। वे जिसको जिस वस्तु की जब जरूरत है उसके लिये अलग-अलग वैसी ही हिदायत या आदेश करते हैं। इसलिये गुरुमत का महत्व है। यदि पुस्तक पढ़ कर साधन करोगे तो सम्भव है वह लाभदायक न हो। गुरु तुम्हारी जरूरत को पूरा कराने के लिये उसी के अनुसार आदेश कर देगा। यहाँ हर एक व्यक्ति की आवश्यकतायें अलग-अलग हैं और उनकी प्राप्ति का स्थान भी अलग-अलग है। यदि गुरु चाहता है तो उसी स्थान (Stage) पर ले जा कर संस्कार या ख्याल दे सकता है। जब तक वह वहाँ नहीं ले जायेगा वह वांछित वस्तु नहीं दे सकता।

यह राजे सीना है। (अर्थात् यह अन्तरीय भेद अन्तर में गुरु शिष्य को देता है।) जो गुरु अपने पिंड़, अन्ड और ब्रह्मण्ड से निकल कर परम तत्व में लय हो सकता हैं वह यदि उस अवस्था में बैठकर भला चाहे तो निचले स्थानों वालों का भला होना चाहिये।

मैं निचली अवस्थाओं का संस्कार नहीं दे सकता। मेरी निचली अवस्थायें समाप्त हो चुकी हैं। मैं निचली अवस्थाओं पर नहीं आ सकता। यह मेरे वश की बात नहीं है। दाता दयाल ने कहा था-

मैं तो जंगल में पड़ा हूँ और तुम बस्ती में हो।

जंगल से अभिप्राय सुनसान से है अर्थात् अन्तिम अवस्था से है जहाँ न राम न कृष्ण, न गुरु न शिष्य। वह आदिधाम है मगर तुम इस दर्जे तक नहीं पहुँच सकते। इसलिए अपने परिवार की बेहतरी की सोचो। प्रेम ही जीवन है। दुनिया से प्रेम नहीं कर सकते तो घर वालों से तो करो। जिनको तुम्हारे साथ लगाया है अर्थात् परिवार वालों, माता-पिता, स्त्री, पुत्र, पुत्री, भाई भतीजे आदि से प्रेम करना सीखो। यदि प्रेम है और उनसे द्वेष नहीं है तो गुरु की जात या निज स्वरूप में और तुम में कोई अन्तर नहीं। (देवीचरन को संकेत करते हुए कहा कि अपने जीवन की निरख परख (Watch) करते रहो। मन के विचारों की निरख परख किया करो। अपनी रहनी को देखो।)

क्या? देश में हिन्दू को मुसलमान से, सिक्ख को हिन्दू से, जैनी को बुद्ध से प्रेम है? दिल को देखो। यदि हृदय में प्रेम है तो तुम ही गुरु हो।

किसी भी सन्यासी और ब्रह्मचारी को गुरु मत मानो। इनको जीवन का अनुभव नहीं होता है। पुस्तकीय ज्ञान सुनाकर जीवन नष्ट कर देंगे।

एक व्यास के सत्संगी ने अपने लड़के को कहीं दाखिल करा दिया। एक महात्मा ने उसे गलत वैराग की शिक्षा दी। वह घर छोड़कर भाग गया। राधास्वामी मत की शिक्षा आम जनता को नहीं है। त्याग वैराग से बच्चों का जीवन तबाह हो जाता है। इसलिए किसी पुर्ण पुरुष का पल्ला पकड़ो। मेरे छोटे भाई रायसाहब सुरेन्द्रनाथ को दाता दयाल ने नाम की दीक्षा दी। उनका शब्द और प्रकाश खुल गया। उन्होंने कहा यह शिक्षा तुमको नहीं। तुम्हारे लिए यह शिक्षा है :-

'काम का अर्थ है जीवन और जीवन का अर्थ है काम।'

यह उनकी अमली शिक्षा थी।

इसलिये अपने घर वालों के लिये त्याग करो और उनसे प्रेम करो। आप लोग उनसे मोह वश प्यार करते हो अथवा अपने स्वार्थ को। उनके हित के लिये प्रेम नहीं करते। हित से प्रेम करो।

विषय था कि तुम्हारा जीवन कैसे सुख से गुजरे। जीवन राम- राम या ब्रह्म-ब्रह्म आदि कहते रहने से सुख से नहीं गुजर सकता। यह सब शक्तियाँ तुम में हैं। जो पुरुष ऊँचा या उच्च अवस्था में चढ़ कर अपने देह, मन और आत्मा का मालिक हो जाता है, उसका अपनी देह और आत्मा पर काबू हो जाता है। ऐसी अवस्था वाले पुरुष का किसी से द्वेष करना असम्भव होता हैं। वह सबका हितैषी होता है। यदि इस अवस्था में रहकर दूसरों को रेडीयेशन देता है तो दूसरों को लाभ होता है।

जिस स्थान से साधन से जो वस्तु मिल सकती है वह बताता हूँ ताकि तुमको सही पता लग जाये:-

त्रिकुटी के स्थान पर साधन करने से विवेक और समझ मिलती है।

सुन्न महासुन्न- - -- ---- मस्ती और आनन्द

भंवर गुफा-- --- --- मालिक का नाम

सतपद केवल शब्द और प्रकाश का दर्जा है। अभ्यास सबके लिये जरूरी नहीं है। हाँ, इससे लाभ अवश्य होता है। वह लाभ है मन की दशा का बदल जाना। कोई व्यक्ति अभ्यास नहीं करता मगर अभ्यासी की संगत करता रहे तो उसकी भी हालत बदलती है। उदाहरण के तौर

पर बताता हूँ। बच्चा मुस्करा रहा है। अब जो व्यक्ति उस बच्चे को देखेगा चिन्ता भूल जायेगा। उस समय उसको खुशी मिल जायेगी। गुरु का बाह्य रूप बच्चे के समान होता है। वह बेगम, बेफिक्र, निर्भय ओर अडोल होता है। जो संत या महात्मा इस अवस्था में चला जाये तो जो कोई उसकी संगत करेगा उसके दर्शन करेगा उसमें खुशी, शान्ति बेफिक्री आनी चाहिये।

सत्संग दो तरह का होता है :-

१. बच्चों जैसा। वह कोई मंत्र नहीं देता। मगर जो उसे देखेगा वह प्रसन्न होगा। दूसरा अक्ल वालों को। उनको वचन का सत्संग है, ताकि उनकी संशयात्मक बुद्धि से भ्रान्ति दूर हो जाये। जो कलियुगी जीव हैं अर्थात् जो हमेशा क्यों ओर कैसे करते रहते हैं उनके भ्रम वचन द्वारा ही दूर हो सकते हैं

मैं दाता दयाल से प्रेम करता था। उन्हीं को सब कुछ मानता था मगर जो वह कहते उस पर विश्वास नहीं आता था। उस भाव को बदलने को उन्होंने मेरे नाम यह शब्द लिखा था-

मन तू सोच समझ पगधार॥

....

भक्ति पशु बन्धन नहिं काटे बूढ़ा काली धार॥

भक्ति पशु कौन? वह जो किसी से बँधा हुआ है। बाहरी वस्तु या रूप का सत मान लेना अथवा उसे सत मानकर उससे बँधे रहना। जब अंतर में अभ्यास करते हो तो रूप प्रगट होते हैं। चाहे गुरु का रूप हो या

किसी अन्य इष्ट का। उनको सत मानकर उनके साथ बँधे हुये हो। जितने दृश्य अन्तर में पैदा होते हैं हम उनको सत मान कर उनमें फँसे हैं। इसका नाम जड़ चेतन की ग्रंथि है। जब इसका ज्ञान हो जाता है तो फिर किसी में फँसते नहीं। सब करते हुये कुछ नहीं करते। व्यवहारिक जगत में सबके साथ व्यवहार करते हैं। पिता के साथ पिता का सा पुत्र के साथ पुत्र जैसा मगर इसको सत न मानकर इसमें फँसते नहीं। इसी अवस्था को प्राप्त करना है। इसी के लिये सत्संग और साधन है। यदि मैं दाता दयाल का सेवक न बनता तो यह राज या रहस्य न मिलता। इसी की प्राप्ति को गुरु सेवा अथवा गुरु भक्ति है। मैंने बहुत कुछ वर्णन कर दिया। इन बातों पर अमल करो तुम्हारा भला होगा।

प्राणी मात्र का भला हो।

सत्पुरुष दयाल फकीरचन्द जी महाराज का

आठवां-पत्र (२८-९-६३)

देवीचरन! राधास्वामी।

मैंने यह पत्र अपनी नीयत से तुमको इष्ट पद पर पहुँचाने और तुम्हारे संशय भ्रम दूर करने के लिए लिखे थे।

देखो! आज मैं शहर से लौट रहा था। रास्ते में एक व्यक्ति मिला। वह कहने लगा बाबा जी! आज सुबह के साधन में आप आये और दो मंजिलें तय कराई थी बाकी नहीं। यह क्यों? अब ऐ देवीचरन! मुझे कोई इल्म नहीं है। न मैं उसके अन्दर गया न मुझे मालुम है। फिर क्या है! मनुष्य का अपना ही भाव, इच्छा और वासना है। मनुष्य के अन्दर उसका अपना मन व आत्मा महा बलवान है। दाता दयाल का शब्द है:-

यह मन समझन योग साधो! यह मन समझन योग॥
मन ही ज्ञान और मन ही ध्यान है, मन ही मोक्ष और भोग॥

साधो

मन में वेद को पढ़ते ब्रह्मा, शंकर करते योग॥ साधो०
मन ही अन्दर सृष्टी व्यापी, मन ही में है रोग॥ साधो०

मन गोविन्द मन गोरख रूपा, मन ही योग वियोग॥ साधो०
मन ही पानी मन ही अग्नि, मन ही आनन्द सोग॥ साधो०

मन ही गुरु है मन ही चेला, मन ही ब्रह्म संयोग॥ साधो०
मन ही का व्यवहार जगत में, नाहीं जानें लोग॥ साधो०

मैं भी किसी समय इसी तरह के अज्ञान और भ्रम में था। दाता दयाल का एक निम्नलिखित शब्द है जो मेरे नाम है–

तू फकीर है कैसा भाई, भूल भरम चित लाया क्यों।
तज अज्ञान की बातें जल्दी, ज्ञान ध्यान अलसाया क्यों॥

अंखिया उलट तमाशा देखे, अन्तर की लीला न्यारी।
सब कुछ अन्तर तेरे भरा है, इससे आँख हटाया क्यों॥

गुरु तो तेरे घट के बासी, तू गुरु घट में रहता है।
तूने भूल भरम से प्यारे, यह सिद्धान्त भुलाया क्यों॥

बाहर भीतर गुरु हैं व्यापक, कहीं राज कहीं प्रजा है।
चेले में गुरु गुरु में चेला, नहीं तो उसे चिताया क्यों।

आप आपको आप पिछानो, राधास्वामी की है बानी।
कहा और का नेक न मानो, यह बानी बिसराया क्यों।

मैं आशा करता हूँ कि तुम फकीर चन्द से वह सम्बन्ध न रखोगे जो पहिले रखते थे।

तेरा सतगुरु तेरे अन्तर तेरा साहब तेरे पास।
अज्ञान भरम से देवीचरन, तू क्यों रहता है उदास॥

वह तेरा है तू है उसका, वह तेरी अपनी जात।
कर निश्चय तू देवीचरन, वह तो हर दम तेरे पास॥

गुरु ज्ञान बिना जर भटकत फिरता और दुख उठाये।
हमने भी ए देवीचरन! बहुते खेल खिलाये॥

काल माया का सकल पसारा, यही सबको भरमाये।
हम थे बड़े भाग्यवान, जो दयाल संगत में आये।

खेल खिलाये खूब सुहाने, भूल और भरम मिटाये॥
हमने चोला बदला भाई, डंके की चोट लगाये।

लुट गई दुनिया अज्ञान भरम में, साफ न कोई गाये॥
राधास्वामी मत था कुछ और ही गुरुओं ने और ही बताया।
अज्ञान भरम फैलाकर जग में ,जीवों को भरमाया॥

मेरे लेखों को सुरक्षित रखना और प्रकाशित करते रहना। यह एक अमूल्य तोहफा है। आज जन साधारण कदर नहीं करते हैं। समय आयेगा जब मेरे वचनों को पब्लिक पसंद करेगी। सुखी रहो।